मायापुर इन्स्टीट्यूट

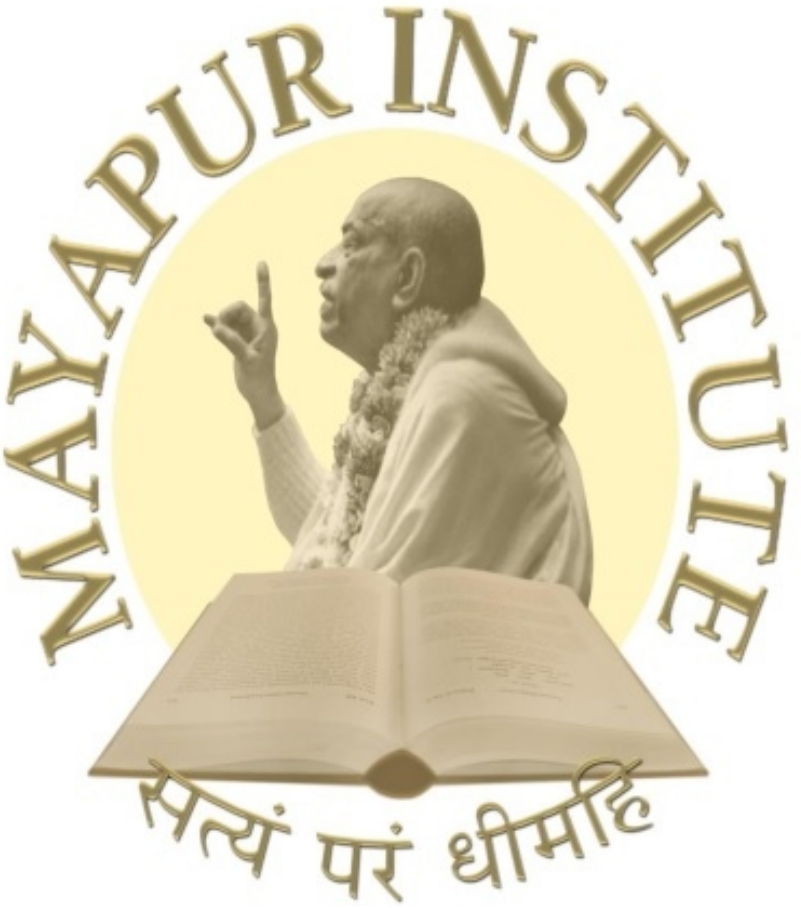

भक्तिशास्त्री पाठ्यक्रम

विद्यार्थियों हेतु सहायक पुस्तिका

द्वितीय संस्करण, फरवरी 2014

अन्तर्राष्ट्रीय कृष्ण भावनामृत संघ
संस्थापकाचार्य –कृष्णकृपामूर्ति ए. सी. भक्तिवेदान्त स्वामी प्रभुपाद

समर्पण

ॐ अज्ञान-तिमिरान्धस्य ज्ञानाञ्जन-शलाकया
चक्षुरून्मीलितं येन तस्मै श्री-गुरूवे नमः
नमः ॐ विष्णु-पादाय कृष्ण-प्रेष्ठाय भूतले
श्रीमते भक्तिवेदान्त-स्वामिन् इति नामिने
नमस्ते सारस्वते देवे गौर-वाणी-प्रचारिणे
निर्विशेष-शून्यवादी-पाश्चात्य-देश-तारिणे

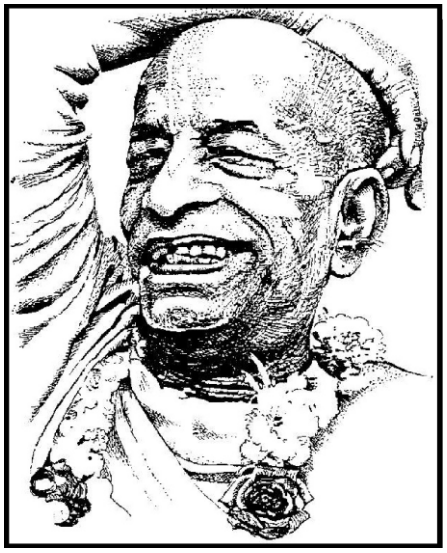

''मेरी पुस्तकों में कृष्णभावनामृत के सिद्धान्त का पूरी तरह से वर्णन किया हुआ है, अतः यदि ऐसा कुछ है जो तुम समझ नही पाते, तो तुम्हें केवल इतना करना है कि उसे बार-बार पढ़ो। नियमित रूप से प्रतिदिन पढ़ने पर यह ज्ञान तुम्हारे हृदय में स्वतः प्रकट हो जाएगा और इस विधि के माध्यम से तुम्हारे आध्यात्मिक जीवन में प्रगति होगी।

(श्रील प्रभुपाद द्वारा बहुरूप को पत्र -बम्बई 22 नवम्बर, 1974)

''हम मायापुर इन्स्टीट्यूट का भक्ति-शास्त्री-पाठ्यक्रम श्रील प्रभुपाद को समर्पित करते हैं। हमारी कामना है कि यह प्रयास उन्हें और इस्कॉन के वैष्णवों को प्रसन्नतादायक हो।''

आभार

विशेष रूप से धन्यवाद :
भूरिजन दास को उनकी प्रेरणा व मार्गदर्शन के लिए ।
वी.आई.एच.ई. को पाठ्यक्रम की आधारशिला व पृष्ठभूमि तैयार करने के लिए।
वी.टी.ई. को क्रमबद्ध शिक्षा में उनके मार्गदर्शन व प्रशिक्षण के लिए।

हमें सम्पर्क करें

पाठ्यक्रम के विषय में और अधिक जानकारी के लिए कृपया सम्पर्क करें -
Mayapur.Institute@pamho.net
अथवा इस पते पर हमारी वेबसाईट देखिए : **http://mayapurinstitute.org**

विषय - सूची

भक्तिशास्त्री और व्यवस्थित अध्ययन पर श्रील प्रभुपाद 5

पाठ्यक्रम के उद्देश्य 6

पाठ्यक्रम का संक्षिप्त विवरण 7

भक्ति-शास्त्री परीक्षा 9

इकाई 1 : भगवद्-गीता अध्याय 1-6 14

इकाई 2 : भगवद्-गीता अध्याय 7-12 31

इकाई 3 : भगवद्-गीता अध्याय 13-18 44

इकाई 4 : भक्तिरसामृतसिंधु 64

इकाई 5 : उपदेशामृत और श्री ईशोपनिषद् 82

साधना प्रपत्र 100

भक्ति-शास्त्री और व्यवस्थित अध्ययन के विषय पर श्रील प्रभुपाद

मैं अपने सभी शिष्यों को बहुत सावधानीपूर्वक यह दर्शनशास्त्र सीखने के लिए प्रोत्साहित करना चाहता हूँ.....

जनवरी 1970 में हम अपने सभी विद्यार्थियों के लिए इस पुस्तक पर एक परीक्षा आयोजित करेंगे और सभी उत्तीर्ण करने वालों को भक्ति-शास्त्री की उपाधि प्रदान की जाएगी। इन परीक्षाओं के माध्यम से मैं अपने सभी शिष्यों को बहुत सावधानीपूर्वक कृष्णभावनामृत का यह दर्शन शास्त्र सीखने के लिए प्रोत्साहित करना चाहता हूँ, क्योंकि इस संदेश को सभी कोनों तक पहुँचाने के लिए बहुत से प्रचारकों की आवश्यकता पड़ेगी।

महापुरूष को पत्र, लॉस एंजिलिस, 7 फरवरी, 1969

सभी उच्च कोटि के प्रचारक बन जाओ और यह पुस्तकों को भली-भाँति पढ़ने पर निर्भर करता है ....

मैं अत्यंत प्रसन्न हूँ कि तुम हमारी पुस्तकों को गंभीरतापुर्वक पढ़ने व समझने के लिए उत्सुक हो। तुम्हारा बहुत-बहुत धन्यवाद। तो इसे पूरे दिल से करो। हमें अच्छे प्रचारकों की भी आवश्यकता है। प्रचार केवल मुझ पर ही निर्भर नहीं रहना चाहिए। मेरे सभी शिष्यों को अच्छा प्रचारक बन जाना चाहिए और यह पुस्तकों को भली-भांति पढ़ने पर निर्भर करता है, जिससे तुम सही निष्कर्ष तक पहुँच सको।

हृदयानंद को पत्र, लॉस एंजिलिस, 5 जुलाई, 1971

हमें ऐसे बहुत से प्रचारकों की आवश्यकता है जो शास्त्रों में अत्यन्त निपुण हों ....

मैं यह देखकर अत्यधिक प्रसन्न हूँ कि तुम मेरी पुस्तकें बहुत अच्छी तरह से पढ़ रहे हो। कृपया ऐसा करना जारी रखो। हमें संसार को कृष्णभावनामृत स्वीकार करने के लिए आश्वस्त करने हेतु ऐसे बहुत से प्रचारकों की आवश्यकता है, जो शास्त्रों में अत्यन्त निपुण हो।

वृदांवन चन्द्र को पत्र, बॉम्बे, 9 नवम्बर, 1970

मेरी कभी मृत्यु नहीं होगी । मैं अपनी पुस्तकों में जीवित रहूंगा ।

प्रभुपाद के आगमन के अगले दिन एक प्रेस वार्ता आयोजित की गई, जिसमें सभी प्रमुख समाचार पत्र व टेलेविजन स्टेशन उपस्थित थे। बर्कली के विशाल मंदिर कक्ष में टेलीविजन लाइटों की चमचमाती रोशनियों के प्रकाश में बैठे हुए श्रील प्रभुपाद से प्रश्न किया गया, ''आपकी मृत्यु के पश्चात् आन्दोलन का क्या होगा?'' प्रभुपाद ने तुरन्त ही उत्तर दिया : ''मेरी कभी मृत्यु नहीं होगी।'' सभी अतिथियों व भक्तों की हर्षध्वनि के मध्य श्रील प्रभुपाद ने आगे कहा, ''मैं अपनी पुस्तकों में सदा जीवित रूप में विद्यमान हूँ।''

श्रील प्रभुपाद के साथ ग्रीष्मकालीन सत्र, बैक टू गॉडहेड पत्रिका # 10-10, 1975

मैं चाहता हूँ कि मेरे सभी आध्यात्मिक पुत्र व पुत्रियाँ इस भक्तिवेदान्त उपाधि के उत्तराधिकारी बनें।

जो इस परीक्षा में उत्तीर्ण होगा, उसे भक्तिवेदांत की उपाधि दी जाएगी। मैं चाहता हूँ कि मेरे सभी आध्यात्मिक पुत्र व पुत्रियाँ इस भक्तिवेदान्त की उपाधि के उत्तराधिकारी बनें, जिससे कि परिवार का यह दिव्य डिप्लोमा आने वाली पीढ़ियों में जारी रहे .... यही मेरी योजना है। अतएव हमें केवल बाहरी लोगों के पढ़ने के लिए इन पुस्तकों को प्रकाशित नहीं करना चाहिए, अपितु हमारे विद्यार्थियों को हमारी सभी पुस्तकों में भली-भाँति निपुण होना चाहिए जिससे कि हम आत्म-साक्षात्कार के मामले में सभी विरोधी दलों को पराजित करने के लिए तैयार रह सकें।

हंसदूत को पत्र, लॉस एंजिलिस, 3 जनवरी 1969

भक्ति शास्त्री (इस्कॉन द्वारा)

अपनी योग्यताओं का उल्लेख करते समय, तुम यह भी उल्लेख कर सकते हो कि तुम (इस्कॉन द्वारा) एक भक्ति-शास्त्री हो।

स्वरूप को पत्र, मॉरीशस, 24 अक्टूबर, 1975

मायापुर इन्स्टीट्यूट भक्ति-शास्त्री पाठ्यक्रम के उद्देश्य

1. भक्ति शास्त्रों के मूलभूत ज्ञान को कंठस्थ एवं आवश्यकतानुसार स्मरण करने में विद्यार्थियों की सहायता करना।

2. विद्यार्थियों में भक्ति शास्त्रों से सम्बन्धित आध्यात्मिक ज्ञान की समझ गहराई से विकसित करना।

3. भक्ति शास्त्रों की शिक्षाओं को अपने जीवन में व्यक्तिगत रूप से उतारने में विद्यार्थियों की सहायता करना।

4. भक्ति शास्त्रों की शिक्षाओं के आधार पर प्रभावी ढंग से कृष्णभावनामृत का प्रचार करने की विद्यार्थियों की इच्छा व क्षमता में वृद्धि करना ।

5. श्रील प्रभुपाद के भाव व अभियान, जैसा कि भक्ति शास्त्रों की लेखनी में प्रकट होता है, को समझने व सराहने और उस मंतव्य को इस्कॉन समुदाय में फैलाने में विद्यार्थियों की सहायता करना।

6. भक्ति शास्त्रों के सिद्धांतों को वैष्णव संपूर्णता व अखंडता तथा देश काल व्यक्तित्व के विचार के अनुसार उचित ढंग से प्रयोग करने में विद्याार्थियों की सहायता करना।

7. भक्ति शास्त्रों में वर्णित गौड़ीय वैष्णव संस्कृति, आचरण व वैष्णव संग के सिद्धांतों को सराहने व उचित ढंग से प्रयोग करने में विद्यार्थियों की सहायता करना।

8. भक्ति शास्त्रों में वर्णित वैष्णव गुणों को विकसित करने में विद्यार्थियों की सहायता करना।

ज्ञान	**ज्ञान की स्मृति व आवश्यकतानुसार पुनर्स्मृति समझना ।**
कौशल	**व्यक्तिगत उपयोग** **प्रचार में उपयोग**
मूल्य	**भाव व अभियान** **वैष्णव संपूर्णता व अखंडता**
	संस्कृति व सदाचार **वैष्णव गुण**

उद्देश्य

इन उद्देश्यों में से प्रत्येक का हर इकाई के लिए अपने सापेक्ष शैक्षणिक लक्ष्य (पठन-प्रयोजनम्) है जिसकी सूची विद्यार्थियों की सहायक पुस्तिका में दी गई है। ये उदेश्य इसका वर्णन करते हैं कि हर इकाई के अन्त में विद्यार्थी क्या प्राप्त करने में सक्षम होंगे जिससे यह दिखाया जा सके कि लक्ष्य प्राप्त किए जा चुके हैं। लक्ष्य व उद्देश्यों के विषय में और अधिक जानकारी के लिए कृपया वी.टी.ई. शिक्षकों के मार्गदर्शन हेतु पाठ्यक्रमों का संदर्भ लें।

पाठ्यक्रम का परिचय

मायापुर इन्स्टीट्यूट के भक्तिशास्त्री पाठ्यक्रम की विषय-वस्तु को पाँच इकाईयों में विभाजित किया गया है, जिनमें चार महत्वपूर्ण भक्ति शास्त्री पुस्तकें सम्मिलित हैं। निम्नलिखित सारणी पाँचों इकाईयों को सूचीबद्ध करती है।

इकाई 1	भगवद-गीता अध्याय 1-6
इकाई 2	भगवद-गीता अध्याय 7-12
इकाई 3	भगवद-गीता अध्याय 13-18
इकाई 4	भक्तिरसामृतसिंधु
इकाई 5	उपदेशामृत और श्री ईशोपनिषद्

पाठों की संख्या

प्रत्येक इकाई के लिए कक्षाओं की संख्या पाठ्यक्रम सहायक द्वारा निम्नलिखित मार्गदर्शक सिद्धांतों के अनुसार निर्धारित की जाएगी। भक्ति शास्त्री की कक्षाओं की कुल संख्या 54-74 के बीच होगी।
प्रत्येक कक्षा की अवधि 2-3 घंटे की होगी।

इकाई	विषयवस्तु	कक्षाओं की संख्या
1	भगवद्-गीता अध्याय 1-6	14-18
2	भगवद्-गीता अध्याय 7-12	10-14
3	भगवद्-गीता अध्याय 13-18	8-12
4	भक्तिरसामृत सिंधु	10-14
5	उपदेशामृत और ईशोपनिषद्	12-16

इकाईयों का कार्यक्रम

उपरिलिखित इकाईयों की विषयवस्तु को पाठ्यक्रम संयोजक के विवेक के अनुसार किसी भी क्रम में पूरा किया जा सकता है।

भक्ति-शास्त्री विद्यार्थियों के लिए अध्ययन सामग्री

अध्ययन सामग्री

पाठ्यक्रम के दौरान आपको निम्नलिखित पुस्तकों की आवश्यकता पड़ेगी :

- भगवद्-गीता यथारूप
- भक्तिरसामृत सिन्धु
- उपदेशामृत
- श्री ईशोपनिषद्

पाठ्यक्रम के दौरान विद्यार्थियों को निम्नलिखित पुस्तकें दी जाएंगी ।

- भक्तिशास्त्री विद्यार्थियों हेतु सहायक पुस्तिका (यह पुस्तिका)

अतिरिक्त सामग्री

आपको निम्नलिखित अध्ययन दिग्दर्शिकाओं की भी आवश्यकता पड़ेगी :

- सरेंडर अनटू मी भूरिजन दास द्वारा (वी.आई.एच.ई. प्रकाशन)
- श्रील प्रभुपाद उक्तियों की पुस्तिका (एम.आई. द्वारा उपलब्ध)

विद्यार्थियों हेतु सहायक पुस्तिका का किस प्रकार उपयोग करें

प्रत्येक इकाई में आपको मिलेगा

- पाठ्यक्रम का संक्षिप्त परिचय
- अतिरिक्त लेख
- पूर्व-स्वाध्याय (आरंभिक स्वयं अध्ययन हेतु प्रश्न)
- चुनी हुई उपमाएँ
- खुली पुस्तक की सहायता से मूल्यांकन हेतु प्रश्न
- पठन-प्रयोजनम् (शैक्षणिक उद्देश्य)

खुली पुस्तक की सहायता से मूल्यांकन

खुली पुस्तक की सहायता से मूल्यांकन इकाई के दौरान कभी भी हल किया जा सकता है। प्रत्येक इकाई पूर्ण होने के पश्चात् इसे जमा करना अनिवार्य है।

पूर्व-स्वाध्याय (आरंभिक स्वयं अध्ययन हेतु प्रश्न)

आरंभिक स्वाध्याय प्रश्नों को इकाई के पहले या दौरान कभी भी पूर्ण किया जा सकता है। विद्यार्थियों को आंरभिक स्वाध्याय प्रश्नों के उत्तरों को शिक्षकों को जमा करने की आवश्यकता नहीं हैं। तथापि ये प्रश्न उन प्रश्नों का भण्डार बनाते हैं जो अन्तिम बंद पुस्तक मूल्यांकन में पूछे जा सकते हैं।

चुनी हुई उपमाएँ

बंद पुस्तक मूल्यांकन के लिए चुनी हुई उपमाओं का भी पुनरावलोकन करना चाहिए। अधिक जानकारी के लिए भक्तिशास्त्री मूल्यांकन से संबंधित आगामी अंश देखिए।

भक्ति-शास्त्री मूल्यांकन

आरंभिक स्वयं अध्ययन हेतु प्रश्न एवं उपमाएँ

प्रत्येक इकाई के अंत में बंद-पुस्तक परीक्षाएँ ली जाएंगी। इस परीक्षा के लिए प्रश्न हर इकाई के पूर्व-स्वाध्याय वाले अंश से चुने जाएंगे। पूर्व-स्वाध्याय वाले अंश में दी गई उपमाएँ भी बंद-पुस्तक परीक्षा में सम्मिलित की जा सकती हैं।

बंद-पुस्तक मूल्यांकन एवं कंठस्थ करने हेतु श्लोक

प्रत्येक इकाई के अंत में बंद-पुस्तक मुल्यांकन तथा मौखिक श्लोक कंठस्थीकरण मूल्यांकन किया जाएगा। पाठ्यक्रम का समापन एक अंतिम बंद पुस्तक मूल्याकंन के साथ होगा जिसमें पूर्व की सभी इकाईयों का समावेश होगा।

खुली-पुस्तक मूल्यांकन

पाठ्यक्रम सहायक प्रत्येक इकाई के अंत में सूचीबद्ध प्रश्नों में से मूल्यांकन के लिए प्रश्नों का चुनाव करेंगे। खुली-पुस्तक मूल्यांकन के प्रश्नों के उत्तर प्रत्येक इकाई के समापन के पश्चात् जमा करने की निर्धारित तिथि से पूर्व जमा कर दिए जाने चाहिए। सहायक शिक्षक यह निर्धारित करेंगे कि इसके लिए विद्यार्थियों को कितना अतिरिक्त समय दिया जाना चाहिए। अपने उत्तरों को संग्रहित व संपादित करने के लिए विद्यार्थी परस्पर अथवा अध्यापक के साथ चर्चा कर सकते हैं, किंतु यदि विद्यार्थी एक दूसरे से उत्तरों की नकल करते पाए गए तो उन्हें दंड दिया जाएगा। (http://www.iskconeducation.org/articles/general-policies). विलम्ब से अथवा पुनः जमा किए गए खुली-पुस्तक परीक्षा प्रश्नों का विस्तृत मूल्यांकन नहीं बताया जाएगा। केवल समय पर जमा किए गए प्रश्नों का विस्तृत मूल्यांकन किया जाएगा। मूल्यांकन नीतियों के विषय में और अधिक जानकारी पर आपके सहायक शिक्षक द्वारा चर्चा की जाएगी।

इकाई मूल्यांकन

प्रत्येक इकाई के सम्बन्ध में विद्यार्थियों को उनके लक्ष्य के संगत उनका मूल्यांकन विस्तार से बताया जाएगा। इस मूल्यांकन में उनकी शक्तियों व कमजोरियों पर भी प्रकाश डाला जाएगा। कुल मिलाकर उत्तीर्ण होने के लिए प्रत्येक इकाई में उत्तीर्ण होना अनिवार्य है। इकाई खुली-पुस्तक मूल्यांकन के प्रश्नों के उत्तरों को पुनः जमा करने का अवसर दिया जा सकता है। प्रत्येक इकाई में विद्यार्थी की श्रेणी निम्नलिखित घटकों में प्रदर्शन के योगफल से निर्धारित की जाएगी।

खुली-पुस्तक मूल्यांकन	**65% उत्तीर्णांक 50%**
बंद-पुस्तक मूल्यांकन	**20% उत्तीर्णांक 65%**
श्लोक कंठस्थीकरण	**10% उत्तीर्णांक 50%**
मन्दिर के कार्यक्रमों में उपस्थिति (साधना प्रपत्र)	**5% उत्तीर्णांक 50%**
कक्षा में सहभागिता (समयबद्धता, उपस्थिति और सामान्य रवैया)	**निरीक्षण के अन्तर्गत** (असाधारण मामलों में विचार किया जाएगा)

भक्ति शास्त्री प्रमाणपत्र

विद्यार्थियों को सम्पूर्ण पाठ्यक्रम के लिए सभी इकाईयों के योगफलस्वरूप भी एक श्रेणी दी जाएगी। विद्यार्थी द्वारा प्राप्त श्रेणी को एम.आई. मूल्यांकन बोर्ड के पास अंतिम अनुमोदन के लिए भेजा जाएगा। कुछ अपवादात्मक स्थितियों में विद्यार्थियों को एक साक्षात्कार के लिए बुलाया जा सकता है अथवा मूल्यांकन प्रश्नों का कुछ या सम्पूर्ण भाग पुनः जमा करने के लिए कहा जा सकता है। यदि विद्यार्थी एम.आई मूल्यांकन बोर्ड के निर्णय से असंतुष्ट हैं तो वे इस्कॉन परीक्षा बोर्ड के पास याचिका दायर कर सकते हैं। पाठ्यक्रम को सफलतापूर्वक पूरा करने पर विद्यार्थी इस्कॉन परीक्षा बोर्ड द्वारा प्रदत्त भक्ति-शास्त्री प्रमाणपत्र प्राप्त करेंगे।

नमूना खुली पुस्तक मूल्यांकन उत्तर

खुली पुस्तक मूल्यांकन (प्रचार में उपयोग)

प्रश्न : भगवद्गीता अध्याय 8 में कृष्ण के कथनों का सन्दर्भ लेते हुए यह प्रस्तुत कीजिए कि किस प्रकार भक्तिमय सेवा द्वारा एक शुद्ध भक्त का परम धाम को प्रस्थान सुनिश्चित होता है।

निम्नलिखित प्रपत्र एक घटिया व निम्न-स्तरीय उत्तर का उदाहरण है। उन बिंदुओं पर ध्यान दीजिए जिनमें सुधार की आवश्यकता है :

नमूना उत्तर १ :

जो कोई भी कृष्णभावनामृत में अपना शरीर छोड़ता है, वह तुरन्त परमेश्वर के दिव्य स्वभाव (मद्भाव) को प्राप्त होता है। परमेश्वर शुद्धातिशुद्ध हैं, अतः जो व्यक्ति कृष्णभावनाभावित होता है, वह भी शुद्धातिशुद्ध होता है। स्मरन् शब्द महत्वपूर्ण है। श्रीकृष्ण का स्मरण उस अशुद्ध जीव से नहीं हो सकता, जिसने भक्ति में रहकर कृष्णभावनामृत का अभ्यास नहीं किया। अतः मनुष्य को चाहिए कि जीवन के आरम्भ से ही कृष्णभावनामृत का अभ्यास करे। यदि जीवन के अंत में सफलता वांछनीय है तो कृष्ण का स्मरण करना अनिवार्य है। अतः मनुष्य को निरन्तर 'हरे कृष्ण हरे कृष्ण, कृष्ण कृष्ण हरे हरे। हरे राम हरे राम, राम राम, हरे हरे - इस महामंत्र का जप करना चाहिए । भगवान चैतन्य ने उपदेश दिया है कि मनुष्य को वृक्ष के समान सहिष्णु होना चाहिए। (तरोरिवसहिष्णुना)। 'हरे कृष्ण हरे कृष्ण, कृष्ण कृष्ण हरे हरे। हरे राम हरे राम, राम राम, हरे हरे' का जप करने वाले व्यक्ति को अनेक व्यवधानों का सामना करना पड़ सकता है। तो भी इस महामंत्र का जप करते रहना चाहिए, जिससे जीवन के अन्त समय कृष्णभावनामृत का पूरा-पूरा लाभ प्राप्त हो सके।

इस बिंदु तक विद्यार्थी ने श्रील प्रभुपाद के 8.5 के तात्पर्य को शब्दशः उतार मात्र दिया है। यह अस्वीकार्य है। व्यक्ति को दार्शनिक बिंदुओं को अपने शब्दों में प्रकट करना चाहिए, जिससे उसकी स्वयं की समझ का पता चल सके।

बढ़िया

अर्जुन द्वारा पूछे गए 8 प्रश्नो में से, कृष्ण लगभग पूरा आठवाँ अध्याय अर्जुन के आठवें प्र का उत्तर देने में समर्पित करते हैं : भक्तिमय सेवा में लगे हुए लोग मृत्यु के समय आपको कैसे जान सकते हैं? यह अध्याय हमें जीवन के कठोर सत्य के समक्ष ला खड़ा करता है- हम शाश्वत रूप से इस शरीर में नही रह सकते। अतः हमें इस पर विचार करना होगा कि हम आगे कहाँ जा रहे है। यही बुद्धिमानी है। इस भौतिक जगत में समय हमें तिल-तिल कर मार रहा है फिर भी हमारा मन सपनों से भरा हुआ है। हम अपने जीवन को गंभीरता से लेते हुए प्रतीत नहीं होते और एक ऐन्द्रिय अनुभव से दूसरे की ओर धँसते चले जाते हैं।

यहाँ पर विद्यार्थी प्रश्न के मूल बिंदु से हटता जा रहा है (परम धाम को सुनिश्चित प्रस्थान) और मात्र सामान्य प्रचार की भाषा का प्रयोग कर रहा है। वह ऐसे सन्दर्भों का प्रयोग कर रहा है जिनकी व्याख्या प्रश्न की सीमाओं के परे है अर्थात यह प्रश्न में नहीं पूछा गया है।

जब हम भागवतम् में परीक्षित महाराज के विषय में पढ़ते हैं कि उनके पास जीवन में मात्र 7 दिन शेष थे, तो हम उनके लिए दुःख का अनुभव करते है। प्रभुपाद सदैव कहा करते थे कि हम तो यह भी नहीं जानते कि हमारे पास 7 मिनट हैं या नहीं। कृष्ण एक चिकित्सक के समान हमें निर्देश दे रहे हैं कि कैसे हमें जन्म व मृत्यु के चक्र को स्वीकारने के लिए बाध्य होना अनिवार्य नहीं है। परीक्षित महाराज द्वारा पूछा गया बुद्धिमानीपूर्ण प्रश्न यह था कि ''कैसे मैं एक उचित मनोदशा में मृत्यु को प्राप्त कर सकता हूँ। शुकदेव गोस्वामी ने इस प्रश्न को सभी प्रश्नों के सार के रूप में गौरवान्वित किया । जीवित रहने और इसे जारी रखने की प्रवृत्ति (चूंकि आत्मा शाश्वत है) इतनी गहरी है कि हमें ऐसा लगता है कि हम कभी नहीं मरेंगे (वास्तविक मानवीय सभ्यता में हम यह समझ पाते हैं कि हमारा वर्तमान काल हमारे भूतकाल का परिणाम है। अपने पूर्व जन्म की चेतना के अनुसार, हमारे पास हमारी वर्तमान मनोदशा व वर्तमान स्थिति है। अतएव हम जो अभी सोच रहे हैं, वह हमें भविष्य की स्थिति की ओर ले जाएगा।)

एक अस्पष्ट व निरर्थक कथन.... विद्यार्थी को आठवें अध्याय से सटीक सन्दर्भो का समावेश करना चाहिए। सभी संगत श्लोक अथवा उनके कुछ भाग का समावेश किया जा सकता है।

हमें अपने जीवन को रूप देने में बुद्धिमान होना चाहिए। हमें सावधान होना चाहिए कि हम किस दिशा में जा रहे हैं। हमें यह समझना चाहिए कि हमारा स्रोत क्या है। भगवान व्याख्या करते हैं कि हमारी वर्तमान चेतना व जीवन की परिस्थिति हमारी पिछली मृत्यु का परिणाम है। यदि हम वास्तव में अपने वर्तमान समय पर केंद्रित होना चाहते हैं तो हमें अपनी पिछली मृत्यु के विषय में सोचना होगा। लोग वर्तमान क्षण के चमत्कार की बात करते हैं। वास्तव में 'अभी का परिप्रेक्ष्य हमारी पुरानी मृत्यु का परिणाम है। हमारी पिछली मृत्यु इतनी महत्वपूर्ण है। अपने

अगले जन्म में सर्वोत्तम संभावी जीवन के लिए मैं कहाँ प्रशिक्षण प्राप्त करने वाला हूँ? एक भक्त इस कटु सत्य का अनुभव करता है और इसलिए अपने मन को इस प्रकार विकसित करता है कि जीवन के अंतिम क्षण में हमारा मन अपनी सर्वोच्च संभव अवस्था में हो। सर्वोच्च संभव स्तर कृष्णभावनामृत के विषय में विचार करना होता है। अपनी लीलाओं की रहस्यमयता के माध्यम से, कृष्ण समस्त संसार को मुक्ति प्रदान कर देते हैं।

मन को प्रशिक्षिंत करना सर्वाधिक महत्वपूर्ण कर्त्तव्य है। हमारा मन हमें विनाश की ओर ले जा कर समाप्त कर सकता है। वही मन अद्‌भुत ढंग से कार्य कर हमें वापिस भगवद्‌धाम भी ले जा सकता है। शास्त्र वर्णन करते हैं कि हम भौतिक प्रकृति में मन के द्वारा बद्ध हैं। भक्त भगवान के चरण-कमलों पर अपने मन को केंद्रित करने की विधि अपनाते हैं। मन को चरण कमलों पर केंद्रित करने की उस विधि को अत्यन्त सरल बना दिया गया है।

ठोस संदर्भो के बिना अष्पष्ट व निरर्थक कथन ।

मेरे गुरू महाराज ने एक बार एक कक्षा में कहा था : ''हमें अपने जीवन में सदैव कृष्ण को स्मरण करने का अभ्यास करना चाहिए और इस प्रकार हम सदैव मृत्यु के लिए तैयार रहेंगे ...''

यह एक परखा न जा सकने वाला सन्दर्भ है। प्रश्न स्पष्टत: आठवें अध्याय से सन्दर्भो की माँग करता है।

निम्नलिखित कुंजी ऊपर लिखे गए उत्तर के लिए विद्यार्थी द्वारा प्राप्त अंकों की विवेचना करती है।

खंड A	B	C
स्पष्ट कीजिए कि कैसे एक शुद्ध भक्त का भगवद्‌धाम को प्रस्थान भक्तिमय सेवा द्वारा सुनिश्चित होता है।	2	0.3
भगवद्‌गीता अध्याय 8 में कृष्ण के कथनों के सन्दर्भ दीजिए।	3	0.7
कुल प्राप्तांक		27%

अंकों की जाँच कुंजी का विवरण

खंड A	प्रश्न का एक विशिष्ट घटक
खंड B	उस विशिष्ट घटक में 10 पूर्णांक में से विद्यार्थी के प्राप्तांक
खंड C	उस घटक विशेष का सम्पूर्ण प्रश्न में योगदान

कुल प्राप्तांक

विद्यार्थी के घटक विशेष में अंकों का उस घटक के योगदान से गुणा किया जाता है और कुल योग की गणना की जाती है।

अंतिम टिप्पणी

विद्यार्थी को मानव जीवन के मूल्य व उसके परिणामों के विषय में गहन श्रद्धा है। तथापि, विद्यार्थी प्रश्न का सटीक उत्तर देने से पूरी तरह चूक गया है कि किस प्रकार एक शुद्ध भक्त का परम धाम को प्रस्थान भक्तिमय सेवा द्वारा सुनिश्चित हो जाता है। और उसने आठवें अध्याय से अस्पष्ट संदर्भ ही दिये हैं।

निम्नलिखित प्रपत्र एक अच्छे उत्तर का उदाहरण है। उन बिंदुओं पर ध्यान दीजिए, जिनसे अधिक अंक प्राप्त हुए हैं:

नमूना उत्तर २ :

विद्यार्थी ने श्लोक के उन भागों का विश्लेषण किया है जो विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

उत्तर के आरंभ से ही विद्यार्थी प्रश्न के मुख्य बिंदु पर अपना ध्यान केंद्रित करता है।

भगवान के शुद्ध भक्त, अनन्य भक्त, सदैव कृष्ण के विचारों में डूबे रहते हैं, च मामेव स्मरन् वह हमेशा कृष्ण के पवित्र नामों का जप कर उनका स्मरण करते हैं। इस अभ्यास के द्वारा वे निश्चय ही मृत्यु के समय कृष्ण का स्मरण कर सकते हैं, य: प्रयाति स मद्भावं और इस प्रकार भक्तिमय सेवा द्वारा उनका परम धाम को प्रस्थान सुनिश्चित होता है। वास्तव में कृष्ण स्वयं इसकी गारंटी देते हैं, याति नास्ति अत्र संशय, इसमें कोई संदेह नहीं है। (भगवद्गीता 8.5)

''यदि कोई आध्यात्मिक रूप से कृष्ण की सेवा में निमग्न है, तो उसका अगला शरीर आध्यात्मिक ही होगा, भौतिक नहीं। अतएव 'हरे कृष्ण हरे कृष्ण, कृष्ण कृष्ण हरे हरे। हरे राम हरे राम, राम राम, हरे हरे' का जप जीवन के अंत में अपने अस्तित्व की स्थिति में सफलतापूर्वक परिवर्तन करने की सर्वोत्तम विधि है। श्रील प्रभुपाद द्वारा महाराज भरत द्वारा हिरण का शरीर प्राप्त करने का उदाहरण दिया गया है। (भगवद्गीता 8.6 तात्पर्य)

विद्यार्थी 8.6 के तात्पर्य से उपयुक्त उदाहरणों व तुलनाओं का समावेश करता है

एक शुद्ध भक्त अपने कर्त्तव्यों का पालन कृष्ण के विषय में सोचते रहकर करता है। वह अपने मन व बुद्धि को कृष्ण में नियोजित करता है और अपने कर्त्तव्यों का पालन केवल भगवान की प्रसन्नता के लिए करता है। (भगवद्गीता 8.7)

मन चंचल व दुष्ट होता है अत: मन को बलपूर्वक कृष्ण के विषय में सोचने में प्रयुक्त करना आवश्यक है। उदाहरणार्थ - एक कैटरपिलर एक तितली बनने के विषय में सोचता रहता है और अंतत इसी जीवन में वह एक तितली में परिवर्तित हो जाता है इसी प्रकार, यदि हम निरंतर कृष्ण के विषय में सोचेंगे, तो निश्चित है कि हमारे जीवन के अंत में हम कृष्ण जैसी ही शारीरिक संरचना प्राप्त करेंगे। (भगवद्गीता 8.8 तात्पर्य)

विद्यार्थी एक उपयुक्त कथन तथा उसके सटीक सन्दर्भ को तात्पर्य से उद्धरित करता है और अपने शब्दों में उसकी व्याख्या करता है जो उस की स्पष्ट समझ को दर्शाता है।

कृष्ण को स्मरण करने की विधि अत्यन्त सरल है। भक्त जानते हैं कि भगवान एक व्यक्ति हैं - हम व्यक्ति राम और व्यक्ति कृष्ण तथा उनके विविध लक्षणों के विषय में सोचते हैं। (भगवद्गीता 8.9) अन्य योगों की पद्धतियों का अभ्यास करने वालों के लिए विभिन्न नियम-कायदे होते हैं किंतु एक भक्त को इन सभी के विषय में नहीं सोचना पड़ता क्योंकि वे कृष्ण भावनामृत में रत हैं। और मृत्यु के समय, वे कृष्ण की कृपा से उनका स्मरण कर सकते हैं। एक शुद्ध भक्त उस परिस्थिति विशेष के विषय में चिन्ता नहीं करता, जिसमें वह अपना शरीर छोड़ता है। (भगवद्गीता 8.24 - 27)

अन्य उपयुक्त श्लोकों का स्पष्ट व तर्कसंगत सारांश ।

शुद्ध भक्त सदैव बिना किसी विचलन के कृष्ण का स्मरण करता है, अनन्य चेता: सततं यो मां स्मरति नित्यश: (भगवद्गीता 8.14), अत: परम धाम को उनका प्रयाण सुनिश्चित रहता है, तस्याहं सुलभ: पार्थ नित्य युक्तस्य योगिन:, कृष्ण कहते हैं कि उनके लिए मुझे प्राप्त करना अत्यन्त सरल, सुलभ: है। वास्तव में श्रील प्रभुपाद 8.14 के तात्पर्य में व्याख्या करते हैं कि जो शुद्ध भक्ति का अभ्यास कर रहा है, वह पहले ही परमधाम पहुँच चुका है, ''एक शुद्ध भक्त कहीं भी रह सकता है और अपनी भक्तिमय सेवा के द्वारा वृन्दावन जैसे वातावरण का निर्माण कर सकता है।''

अत्यन्त सुगठित व शक्तिशाली निष्कर्ष विद्यार्थी द्वारा पुस्तक के गहन अध्ययन को दर्शाता है।

खंड A	B	C
स्पष्ट कीजिए कि कैसे कि एक शुद्ध भक्त का भगवद्धाम को प्रस्थान भक्तिमय सेवा द्वारा सुनिश्चित होता है।	8.5	0.3
भगवद्गीता अध्याय 8 में कृष्ण के कथनों के सन्दर्भ दीजिए।	9	0.7
कुल प्राप्तांक		89%

कंठस्थ करने के लिए भक्तिशास्त्री श्लोक

निम्नलिखित श्लोको के संस्कृत रूप व अंग्रेजी अनुवादों को कंठस्थ करना आवश्यक है। प्रत्येक भाग के अंत में इन श्लोकों का मौखिक रूप से मूल्यांकन किया जाएगा। इकाई 5 में सभी श्लोकों का मूल्यांकन किया जाएगा।

इकाई 1

भगवद्गीता अध्याय 1-6

2.7, 2.44, 2.13, 2.20, 3.27, 4.2, 4.8, 4.9
4.34, 5.22, 5.29, 6.47 — 12

इकाई 2

भगवद्गीता अध्याय 7-12

7.5, 7.14, 7.19, 8.5, 8.16, 9.2, 9.4, 9.14
9.25, 9.26, 9.27, 9.29, 10.8, 10.10 — 14

इकाई 3

भगवद्गीता अध्याय 13-18

13.22, 13.23, 14.26, 15.15, 15.7, 18.54,
18.55, 18.65, 18.66 — 9

इकाई 4

भक्तिरसामृत सिन्धु

1.1.11, 1.1.12, 1.2.234, 1.2.255 — 4

इकाई 5

श्री इशोपनिषद

मंगलाचरण और मंत्र 1

उपदेशामृत

श्लोक 1 - 4 — 6

साथ में उपरोक्त सभी श्लोक

कुल 45 श्लोक

इकाई 1 भगवद्गीता अध्याय 1 - 6

इकाई की विषय-वस्तु

अध्याय 1 अर्जुन - विषाद योग

धर्मक्षेत्रे	1.1
दुर्योधन की कूटनीति	1.3-11
पांडवों के लिए विजय के चिन्ह	1.14-20
भक्त वत्सल के रूप में कृष्ण	1.21-27
युद्ध न करने के लिए अर्जुन के तर्क	1.28-46

अध्याय 2 सांख्य योग

अर्जुन का आत्मसमर्पण	2.1-10
ज्ञान	2.11-30
भगवद्गीता में वर्णाश्रम धर्म	अध्याय 1 व 2
कर्म-काण्ड	2.31-38
कर्म / बुद्धि योग	2.38-53
कर्मयोग कर्म सन्यास से श्रेष्ठतर	2.54-3.8
स्थित-प्रज्ञ	2.54-2.72
वर्णाश्रम धर्म और कृष्णभावनामृत	अध्याय 2-3

अध्याय 3 कर्म-योग

योग सीढ़ी	अध्याय 3-6
कर्म-काण्ड से कर्म-योग	3.10-16
कर्म-योग	3.17-35
काम व इन्द्रिय निग्रह	3.36-43

अध्याय 4 ज्ञान योग

कृष्ण के विषय में दिव्य ज्ञान	4.1-15
एक निष्काम -कर्मयोगी के कार्य	4.16-24
यज्ञ और ज्ञान	4.25-42

अध्याय 5 कर्म-सन्यास-योग

एक निष्काम कर्मयोगी का विवरण	5.1-12
एक ज्ञानी का दृष्टिकोण	5.13-26
शांति का सूत्र	5.27-29

अध्याय 6 ध्यान योग

अष्टांग योग	6.1-27
अर्जुन द्वारा अष्टांग योग को अस्वीकार करना	6.33-36
एक असफल योगी की गति	6.37-45

भगवद्-गीता अध्याय 1 से 6 का संक्षिप्त अवलोकन

अध्याय १ कुरूक्षेत्र की रणभूमि में सेनाओं का अवलोकन (अर्जुन-विषाद-योग)

जिस समय दोनों विरोधी सेनाएँ युद्ध के लिए बिल्कुल तैयार हैं, तभी शक्तिशाली योद्धा अर्जुन अपने अंतरंग संबंधियों, आचार्यो, और मित्रों को दोनों सेनाओं में युद्ध करने व अपना जीवन बलिदान करने के लिए तैयार देखता है। दुख व वेदना से विह्वल हो कर अर्जुन अपनी शक्ति खो बैठता है, उसका मन मोहित हो जाता है और वह युद्ध लड़ने का अपना निश्चय त्याग देता है।

प्रस्तावना : युद्ध की तैयारी (१-१३)

धृतराष्ट्र संजय से कुरूक्षेत्र में घटने वाली घटनाओं के विषय में पूछते हैं।

संजय वर्णन करते हैं कि किस प्रकार दुर्योधन कूट-नीति का प्रयोग करते हुए भीष्म तथा अन्यों का अपमान किए बिना द्रोणाचार्य को प्रोत्साहित करने की समस्या को सुलझाता है। भीष्म शंखनाद के साथ अपने सैनिकों को प्रोत्साहित करते हैं। तथापि शंख का प्रतीक चिन्ह उनके पराभव की ओर संकेत करता है।

विजय के चिन्ह (१४-२०)

संजय पाण्डव सेना के विजय के विभिन्न चिन्हों का वर्णन करते हैं, विशेषकर कृष्ण और अर्जुन के दिव्य आध्यात्मिक शंखनाद का, जो धृतराष्ट्र के पुत्रों के हृदय को विदीर्ण कर देता है।

भक्त-वत्सल कृष्ण (२१-२७)

कृष्ण अर्जुन के सारथी के रूप में प्रकट होकर अपनी भक्त-वत्सलता के गुण का प्रदर्शन करते हैं। अर्जुन कृष्ण को आदेश देते हैं कि वे रथ को दोनों सेनाओं के मध्य में स्थापित कर दें जिससे वे वहाँ उपस्थित सभी व्यक्तियों का अवलोकन कर सकें। युद्ध के लिए उपस्थित व्यक्तियों को देखकर अर्जुन युद्ध से हिचकिचाते हैं।

अर्जुन का सन्देह (२८-४६)

करूणा : एक कोमल हृदयी भक्त होने के कारण अर्जुन अपने सगे-सम्बन्धियों को अपने सम्मुख देखकर करूणा से विह्वल हो जाता है और स्वयं को भूल जाता है। वह जीवन की एक भौतिकवादी अवधारणा के कारण भयभीत हो उठा है। **भोग :** वह तर्क करता है कि यदि वह अपने सगे-सम्बन्धियों के जीवन के मूल्य पर राज्य पर विजय प्राप्त करता है तो वह उसका भोग नहीं कर सकेगा। वह अपने सगे-सम्बन्धियों की मारने के कारण प्राप्त होने वाले परिणामों से भयभीत है। **साधुत्व व पापमय परिणामों का भय :** अर्जुन तर्क करता है कि अपने परिवार को मारना पापमय है और व्यक्ति को नर्क का मार्ग दिखाने वाला है। उच्चतर सिद्धान्त यह है कि सच्चा धर्म वही है जैसा कि कृष्ण कहते हैं अथवा चाहते हैं। **कुटुम्ब का नाश :** अर्जुन तर्क करता है कि वंश का विनाश होने से स्त्रियाँ प्रदूषित हो जाएंगी, अवांछित सन्तानें उत्पन्न होंगी, और आध्यात्मिक संस्कृति का अंत हो जाएगा। अंततः अर्जुन युद्ध न करने का निर्णय लेकर अपने धनुष को एक ओर रख देता है और रथ पर नीचे बैठ जाता है।

अध्याय २ गीता की विषय वस्तु का सारांश

अर्जुन कृष्ण के प्रति समर्पण कर उनका शिष्यत्व स्वीकार करता है और कृष्ण अस्थायी भौतिक शरीर व शाश्वत आध्यात्मिक आत्मा के बीच मूलभूत अंतर का वर्णन करते हुए अर्जुन को अपने उपदेशों का आरंभ करते हैं। भगवान आत्मा के स्थानांतरण की पद्धति, परमेश्वर के प्रति नि:स्वार्थ सेवा की प्रकृति और आत्म साक्षात्कार प्राप्त व्यक्ति के लक्षणों का वर्णन करते हैं।

अर्जुन के अन्य संशय और समर्पण (१-१०)

अनिर्णय : अर्जुन भ्रमित हो गया है और अनिर्णय में है कि क्या किया जाए। कृष्ण अर्जुन को दुर्बल और अनार्य कह कर उसके इस अहिंसावाद को धिक्कारते हैं। अर्जुन पुन: तर्क करता है कि अपने वरिष्ठों की हत्या करना पाप है किंतु फिर स्वीकार करता है कि वह भ्रमित हो गया और एक दुर्भाग्यपूर्ण ढंग से आचरण कर रहा है। अतएवं वह कृष्ण के प्रति समर्पण कर देता है और उन्हें अपने गुरू के रूप में स्वीकार कर लेता है और इस प्रकार अपने बीच के सम्बन्ध को मित्रों से गुरू और शिष्य में परिवर्तित कर देता है।

ज्ञान - युद्ध करो ! आत्मा की कभी मृत्यु नहीं होती (११-३०)

गुरू के रूप में कृष्ण अर्जुन की इस पथभ्रष्ट करूणा को धिक्कारते हैं कृष्ण आत्मा के शाश्वत व व्यक्तिगत स्वरूप की तुलना शरीर के अस्थायी स्वरूप से करते हुए अपने उपदेशों का आरम्भ करते हैं। कृष्ण आत्मा के गुणधर्मों का विस्तार से वर्णन करते हैं। इसके पश्चात् कृष्ण अन्य तथ्यों को प्रकट कर अर्जुन के प्रथम तर्क को पराजित करते हैं जिसमें वह करूणा के गुण की शरण लेना चाहता है।

कर्म-काण्ड - युद्ध करो! अपने कर्त्तव्यों का पालन करते हुए भौतिक सुखों की प्राप्ति करो (३१-३८)

अर्जुन के तर्कों को आत्मा के नित्यत्व के ज्ञान के द्वारा पराजित करने के पश्चात् कृष्ण अब एक भिन्न मार्ग अपनाते हैं। यद्यपि अर्जुन अपनी पहचान शरीर के रूप में करता है तथापि एक क्षत्रिय के रूप में युद्ध करके वह सुखी हो जाएगा। अत: कृष्ण अर्जुन के द्वितीय तर्क (सुखोपभोग) को पराजित करने के लिए कर्म-काण्ड के उपदेशों का सन्दर्भ देते हैं। कृष्ण यह स्पष्ट करते हैं कि यदि अर्जुन युद्ध करता है तो वह सुखोपभोग की प्राप्ति करेगा और यदि नहीं करता तो पापमय फलों व अकीर्ति का भागीदार बनेगा। कृष्ण अर्जुन के अन्य तर्कों करूणा और पापमय परिणामों का भी अवलोकन करते हैं। श्लोक 32 उन लाभों का वर्णन करता है जो अर्जुन युद्ध करके प्राप्त करेगा और श्लोक 33-37 अपने कर्त्तव्य से विमुख होने के कारण होने वाली हानि का विवरण देते हैं।

बुद्धि-योग - युद्ध करो! परन्तु कर्म फलों के बिना (३९-५३)

अध्यात्मवादी लोगों को ज्ञानयुक्त कर्मों में व्यस्त करने के लिए कर्म और ज्ञान का एक साथ समन्वय किया जाता है। भगवद्गीता का एक महत्वपूर्ण प्रकरण यह प्रश्न है कि कर्म का त्याग करके अपनी बुद्धि का प्रयोग करते हुए आत्मा और भौतिक पदार्थों में विभेद किया जाए अथवा फलों से आसक्त हुए बिना कर्म किया जाए। यह प्रश्न अर्जुन द्वारा तीसरे, पाँचवे और अठारहवें अध्याय के आरम्भ में पूछा जाएगा। कृष्ण बुद्धि-योग (फलों से आसक्त हुए बिना कर्म करना) का संक्षिप्त विवरण देते हैं। कृष्ण यह भी प्रकट करते हैं कि किस प्रकार इन्द्रिय-भोग और भौतिक ऐश्वर्य, जो कि वेदों के कर्म-काण्ड वाले खंड में वर्णित हैं, भक्तिमय सेवा के मार्ग में दृढ़ता के लिए एक बाधा हैं। वे अर्जुन को कर्म-फलों से आसक्त हुए बिना अपने कर्तव्यों का पालन करके वेदों के परे चले जाने का सुझाव देते हैं। बुद्धि-योग के द्वारा व्यक्ति वैदिक, रीति-रिवाजों के प्रति उदासीन हो जाता है, पापमय फलों से मुक्ति प्राप्त करता है, जन्म व मृत्यु के चक्र से छुटकारा पा जाता है और भगवदधाम वापिस लौट जाता है। इस प्रकार भगवान कृष्ण अर्जुन के पापमय फलों के भय के तर्क को पराजित कर देते हैं।

स्थित-प्रज्ञ - दिव्य आध्यात्मिक चेतना में सुदृढ़ हो जाओ (५४-७२)

कृष्ण द्वारा बुद्धि-योग का विवरण सुनकर अर्जुन यह प्रश्न पूछते हैं कि एक अध्यात्मवादी को किस प्रकार पहचाना जाए। कृष्ण इसका वर्णन करते हैं कि किस प्रकार एक अध्यात्मवादी सभी भौतिक इच्छाओं का परित्याग कर देता है, समभाव और अनासक्त रहता हैं तथापि अपने कर्तव्यों के अनुसार कर्म करना जारी रखता है। इसके विपरीत, ऐसा व्यक्ति जो इन्द्रिय-भोग की विषय

वस्तुओं पर चिन्तन कर अपनी इन्द्रियों को नियंत्रण से बाहर जाने देता है, वह अपनी बुद्धि खो बैठता है और उसका पतन हो जाता है। अतएव कृष्ण अर्जुन को विहित नियमों का पालन कर अपनी इन्द्रियों को नियंत्रित करने का सुझाव देते हैं। ऐसा करके वह भगवान की कृपा प्राप्त करेगा और सुखी हो जाएगा। द्वितीय अध्याय सम्पूर्ण भगवद्गीता का सारांश है। इस अध्याय में कर्मयोग और ज्ञान योग का स्पष्ट रूप से वर्णन किया गया है और भक्ति-योग की भी एक झलक दी गई है।

अध्याय ३ कर्म योग

अध्याय 2 में विभिन्न मार्गों का वर्णन किया गया था, जैसे सांख्य-योग, बुद्धि योग, बुद्धि द्वारा इन्द्रियों पर नियंत्रण और फलों की इच्छा से रहित कर्म करना। कृष्ण ने अर्जुन को बुद्धि योग के द्वारा समस्त बुरे कर्मों से दूर रहने के लिए कहा। यहाँ यदि बुद्धि का अभिप्राय बुद्धिमत्ता के रूप में लिया जाए, तो भगवान कृष्ण की आज्ञा का अर्थ है कि अर्जुन को अपनी बुद्धि का उपयोग कर कर्मों से दूर रहना चाहिए और युद्ध नहीं करना चाहिए। तथापि अर्जुन सोचता है कि कृष्ण मुझ से युद्ध करने के लिए कह रहे हैं। अर्जुन के विचार में कर्म और ज्ञान का परस्पर सामंजस्य नहीं हो सकता। वास्तव में कर्म और ज्ञान आध्यात्मिक चेतना के मार्ग पर दो चरणों के समान हैं।

कर्मों का त्याग अथवा भक्तिमय कर्म? (१-९)

उलझन में पड़ा हुआ अर्जुन उनके पहले कहे गए निर्देशों का स्पष्टीकरण चाहता है। कृष्ण इसका वर्णन करते हैं कि कैसे कर्म-योग, भक्तिमय सेवा, कर्म फलों के त्याग से कहीं अधिक श्रेष्ठ है और साथ ही साथ वे विष्णु के लिए यज्ञ के रूप में कर्म की अनुशंसा व प्रशंसा भी करते हैं जो व्यक्ति को बन्धनों से मुक्ति दिलाने वाला है।

कर्म-काण्ड से कर्म-योग तक (१०-१६)

इसके पहले कृष्ण ने स्थापित किया था कि व्यक्ति को कृत्रिम रूप से अपने विहित कर्म का त्याग नहीं करना चाहिए अपितु अनासक्त रहकर अपने विहित कर्मों का पालन चाहिए। अभी वे उन व्यक्तियों के लिए कार्यपद्धति बता रहे हैं, जो अनासक्त रह कर कर्म करने के स्तर पर नहीं हैं अपितु अपने कर्मों के फलों के इच्छुक हैं। अपनी भौतिक इच्छाएँ धर्म के मार्ग पर रह कर पूरी करने से, आसक्त व्यक्ति का शुद्धिकरण होता जाता है। अब कृष्ण स्पष्ट करेंगे कि कैसे अनाज की उत्पत्ति यज्ञ पर निर्भर है और कैसे इस प्रकार के यज्ञ के मूल स्रोत विष्णु हैं।

कर्म-योग - एक आदर्श स्थापित करने के लिए अनासक्त रह कर नियत कर्म करना (१७-३५)

श्लोक 17 से 21 तक कृष्ण कर्म के दृष्टिकोण से एक आत्म-साक्षात्कार प्राप्त कर चुके व्यक्ति की अवस्था का वर्णन करते हैं। यद्यपि ऐसे आत्म-साक्षात्कार प्राप्त व्यक्ति को विहित कर्म करने की आवश्यकता नहीं होती, तथापि एक आदर्श उदाहरण स्थापित करने के लिए, जिसका सामान्य जन अनुसरण कर सकें, वे विहित कर्म करना जारी रखते हैं। कृष्ण स्वयं के उदाहरण को प्रस्तुत कर के यहाँ दिखाते हैं कि स्वयं भगवान भी शास्त्रों के अनुसार कर्म करते हैं एक आदर्श स्थापित करने के लिए, जिसका अन्य अनुसरण कर सकें। कृष्ण यह भी बताते हैं कि एक कर्मफलों से आसक्त व्यक्ति के साथ एक ज्ञानी व्यक्ति का व्यवहार कैसा होना चाहिए। एक भक्त को स्वयं के आचरण और शब्दों से लोगों को प्रोत्साहित करना चाहिए कि वे अपने कर्मफलों को भक्तिमय कार्यों में लगाएँ। निष्कर्षत: अर्जुन को कृष्ण के प्रति भक्ति भाव से युक्त हो कर युद्ध करने और इस प्रकार सकाम कर्म के बन्धन से मुक्त होने का सुझाव दिया गया। कृष्ण कर्म-योग का अपना वर्णन अर्जुन को यह चेतावनी देते हुए समाप्त करते हैं कि उसे अपने विहित कर्मों का परित्याग नहीं करना चाहिए, चाहे उसमें कुछ त्रुटियाँ ही क्यों न हो। वे बताते हैं कि प्रत्येक व्यक्ति अपने स्वभाव व प्रकृति के अनुसार कर्म करने के लिए बाध्य होता है।

काम और क्रोध से सावधान (३६-४३)

अर्जुन कृष्ण से पूछते हैं कि वह क्या है जो हमें अपने विहित कर्म को त्याग कर पापमय कृत्य करने के लिए बाध्य कर देता है और कृष्ण 'काम' रूपी हमारे नित्य शत्रु का वर्णन करते हैं। एक कृष्णभावनायुक्त व्यक्ति स्थिर बुद्धि से और अपने शुद्ध अस्तित्व की पहचान के साथ कर्म करके इस कामरूपी शत्रु पर विजय प्राप्त कर सकता है।

अध्याय ४ दिव्य ज्ञान

अध्याय 3 में कृष्ण ने वर्णन किया कि काम ज्ञान को आवृत कर लेता है और अज्ञान हमें बन्धन में रखता है। वे कर्म-योग के द्वारा दिव्य ज्ञान प्राप्त करने की अनुशंसा करते हैं। अत: अर्जुन से ज्ञान की सहायता से दिव्यत्व को प्राप्त करने का आवाहन करने के पश्चात, वे व्याख्या करते हैं कि वह ज्ञान क्या है और उसे कैसे प्राप्त किया जाता है।

कृष्ण के विषय में दिव्य ज्ञान (१-१०)

सर्वोच्च अधिकारी के रूप में कृष्ण ने पहले यह ज्ञान विवस्वान को दिया था और अब वे पुन: वही ज्ञान अर्जुन को कह रहे हैं, क्योंकि अर्जुन उन का सखा और भक्त है। यद्यपि कृष्ण अजन्मे हैं, तथापि वे धर्म को पुनर्स्थापित करने, अपने भक्तों की रक्षा करने और दुष्टों का विनाश करने के लिए इस जगत में आते हैं। जो भी इस ज्ञान को समझ लेता है वह कृष्ण प्रेम को प्राप्त कर जीवन के अंत में भगवद्धाम चला जाता है।

कृष्ण सभी मार्गों के मूल स्रोत वर्णाश्रम के रचयिता (११-१५)

अपने बारे में पूर्ण ज्ञान (जिससे व्यक्ति मुक्ति की और अग्रसर होता है) देने के पश्चात् कृष्ण अब यह समझाते हैं कि किस प्रकार वे समस्त मार्गों के परम लक्ष्य है और कैसे सफलता प्राप्त करने के लिए सभी उनकी कृपा पर निर्भर हैं। उन्होंने वर्णाश्रम पद्धति की रचना की है, जिससे मनुष्य अपनी भौतिक कामनाओं की पूर्ति कर सकता है और मुक्ति की ओर प्रगतिशील हो सकता है, किंतु वे स्वयं इस पद्धति से ऊपर व परे हैं।

कर्म योग (१६-२४)

अपनी दिव्य स्थिति का वर्णन करने के पश्चात् कृष्ण कर्म का विश्लेषण करते हैं और यह व्याख्या करते हैं कि आध्यात्मिक स्तर पर कार्य कैसे किया जाए।

यज्ञ हमें दिव्य ज्ञान की ओर ले जाते हैं (२५-३३)

आध्यात्मिक स्तर पर कार्य करने की पद्धति का वर्णन करने के उपरान्त कृष्ण भिन्न भिन्न प्रकार के यज्ञों की व्याख्या करते हैं (श्लोक 25 से 33 तक), क्योंकि इन यज्ञों का अंतिम उद्देश्य दिव्य ज्ञान है, जो कि इस अध्याय की विषय वस्तु है। भगवदगीता 3.9-16 में पहले ही यज्ञ के विषय में वर्णन किया जा चुका है जहाँ कृष्ण समझाते हैं कि विष्णु की संतुष्टि के लिए यज्ञ किए बिना इस संसार में कोई सुखी नहीं रह सकता।

दिव्य ज्ञान का सार (३४-४२)

यह समझाने के बाद कि सभी यज्ञों की परिणिति दिव्य ज्ञान में होती है अब भगवान कृष्ण दिव्य ज्ञान के विभिन्न पहलुओं की व्याख्या करते हैं। दिव्य ज्ञान प्राप्त करने के लिए व्यक्ति को इन्द्रियों पर नियंत्रण करना चाहिए और दैन्यतापूर्वक एक गुरू के प्रति समर्पण कर उनकी श्रद्धापूर्वक सेवा करनी चाहिए। इस प्रकार व्यक्ति पापकर्मों के फलों से मुक्त हो जाएगा और परम भगवान के साथ अपने सम्बन्ध के ज्ञान को समझ सकेगा। कृष्ण अर्जुन से स्वयं को दिव्य ज्ञान के अस्त्र से सुसज्जित कर युद्ध करने का आवाहन करते हैं।

अध्याय ५ कर्म-योग : कृष्ण भावनायुक्त कर्म

अध्याय 4 में कृष्ण ने अर्जुन को यह बताया कि सभी यज्ञों का अंतिम फल दिव्य ज्ञान होता है। किंतु अध्याय 4 के अंत में भगवान अर्जुन को दिव्य ज्ञान में एकनिष्ठ हो कर युद्ध लड़ने का सुझाव देते हैं। अतएव, भक्तिपूर्वक कर्म और ज्ञान में अकर्म, दोनों के महत्व पर एक साथ जोर देकर कृष्ण ने अर्जुन को दुविधा में डाल दिया और उसके निश्चय को भ्रमित कर दिया।

कर्म-योग कर्म-त्याग के बराबर किंतु उससे कहीं अधिक सरल है (१-६)

इस प्रकार अध्याय 5 अर्जुन द्वारा एक वैसे ही प्रश्न से प्रारम्भ होता है, जैसा उसने अध्याय 3 के आरम्भ में पूछा था :'' भक्तियुक्त कर्म और कर्मों के त्याग में क्या श्रेष्ठ है?'' कृष्ण उत्तर देते हैं कि यद्यपि कर्म-त्याग और भक्तिमय सेवा का परिणाम अन्ततः एक ही होता है तथापि भक्ति श्रेष्ठ है क्योंकि यह व्यक्ति को कर्म फलों से मुक्त कर देती है जिससे व्यक्ति शीघ्रता व सरलता से कृष्ण को प्राप्त कर सकता है।

एक निष्काम कर्म-योगी अथवा ज्ञानी का वर्णन (७-१२)

भक्तिमय सेवा की श्रेष्ठता का वर्णन करने के बाद भगवान कृष्ण यह समझाते हैं कि अनासक्त रहकर भक्ति में कर्म कैसे किया जाए। कृष्ण के बारे में ज्ञान हो जाने के बाद जीव यह समझ जाता है कि वह इस भौतिक जगत के अनुरूप नहीं है और तब वह अपने शुद्धिकरण के लिए ही कर्म करता है। अपने कर्मफल कृष्ण को समर्पित करता है और इस प्रकार अनासक्त रह कर केवल कर्त्तव्य के बोध से ही कार्य करता है।

ईश्वर, जीव और प्रकृति के मध्य सम्बन्ध (१३-१६)

अध्यात्मवादी लोग जो अनासक्ति से कर्म करते हैं, उन्हें जीव, भौतिक प्रकृति और परमात्मा के सम्बन्ध के विषय में ज्ञान होता है। यद्यपि भौतिक प्रकृति के तीन गुण और परमात्मा ही कर्म और उसके फल का कारण जान पड़ते हैं किंतु वास्तव में वे उत्तरदायी नहीं है। जब जीवात्मा भौतिक प्रकृति का भोग करना चाहती है, जो तीन गुण परमात्मा की अनुमति से इसके लिए आवश्यक व्यवस्था कर देते हैं।

एक ज्ञानी अथवा परमात्मावादी का दृष्टिकोण (१७-२६)

जो व्यक्ति जीवात्मा, भौतिक प्रकृति और परमात्मा के सम्बन्ध विषयक ज्ञान में स्थिर होता है, वह परमात्मा की शरण ग्रहण करता है, दिव्य ज्ञान प्राप्त करता है और मुक्त हो जाता है। एक कृष्णभावनाभावित व्यक्ति स्वयं में असीमित आनन्द का अनुभव करता है क्योंकि उसकी चेतना कृष्ण में दृढ़ता से स्थित होती है। वह सदैव सभी जीवों की भलाई के कार्यों में व्यस्त रहता है अतएव शीघ्र ही मुक्ति प्राप्त करता है।

ध्यान-योग का परिचय और शान्ति का सूत्र (२७-२९)

इस अध्याय के अंत में कृष्ण ध्यान-योग का परिचय देते हैं और अध्याय 6 में इसकी विस्तार से व्याख्या करेंगे। वे अध्याय के अंतिम श्लोक में शांति का सूत्र भी प्रस्तुत करते हैं : वे स्वयं परम भोक्ता और नियंत्रक हैं और जीवों के सभी कार्यों के शुभफलप्रदाता हैं।

अध्याय ६ ध्यान-योग

पहले 5 अध्यायों में कृष्ण बुद्धि योग अर्थात् भगवान पर स्थिर करके फलों के प्रति अनासक्त रह कर कर्म करने का वर्णन करते हैं। कृष्ण सांख्य-योग, कर्म-योग और ज्ञान-योग आदि मुक्ति प्रदान करने वाली समस्त पद्धतियों का वर्णन करते हैं एवं उन्हें अन्ततः कृष्णभावनामृत की ओर अग्रसर करने वाले पथ के रूप में स्थापित करते हैं।

योगारूक्षु ओर योगारूढ़ अभ्यास (१-९)

अध्याय 5 के अंत में और अध्याय 6 में कृष्ण ध्यान-योग का वर्णन करते हैं और निष्कर्ष स्वरूप कहते हैं कि वे स्वयं ही ध्यान के लक्ष्य हैं। अष्टांग-योग के आरंभिक चरणों में भी कर्म-योग की आवश्यकता होती है। जब व्यक्ति ध्यान की साधना में पूर्ण रूप से सिद्ध हो जाता है तो वह विचलित करने वाले समस्त मानसिक कार्य कलापों को विराम देकर योगारूढ़ स्तर को प्राप्त करता है।

योगाभ्यास के स्तर और समाधि (१०-२७)

अष्टांग-योग के चरणों का वर्णन करने के बाद कृष्ण इन चरणों की साधना विधि के विषय में बताते हैं। दृढ़तापूर्वक साधना करने से, मन को नियंत्रित करने और परमात्मा पर केन्द्रित करने से जीव को परम सिद्धि प्राप्त होती है। इसी अवस्था को समाधि कहा जाता है, जिसमें असीमित दिव्य आध्यात्मिक आनंद का अनुभव होता है।

योग की परिपूर्णता : कृष्ण को परमात्मा के रूप में जानना (२८-३२)

मन को स्वयं पर स्थिर करने की योग साधना का वर्णन करने के बाद कृष्ण योगी के साक्षात्कार की विवेचना करते हैं। प्रभुपाद स्पष्ट करते हैं : एक कृष्णभावनाभावित योगी परम सिद्ध दृष्टा है क्योंकि वह कृष्ण को प्रत्येक जीव के हृदय में परमात्मा के रूप में अवस्थित देखता है। वह सर्वत्र कृष्ण को देखता है और कृष्ण में ही सभी को देखता है। अतः वह सभी जीवात्माओं को समान दृष्टि से देखता है।

अर्जुन द्वारा अष्टांग-योग को अस्वीकार करना (३३-३६)

अर्जुन अष्टांग योग को अव्यावहारिक बता कर अस्वीकार कर देता है, क्योंकि उसे उसका मन नियंत्रित करना असंभव लगता है। कृष्ण अर्जुन को आश्वस्त करते हैं कि सतत् अभ्यास व वैराग्य से मन को नियंत्रित करना संभव है।

असफल योगी की गति (३७-४५)

अर्जुन पूछता है कि असफल योगी की क्या गति होती है, किंतु कृष्ण उसे आश्वस्त करते हैं कि योगी का अगला जन्म शुभ होगा, जिसमें उसे आत्मसाक्षात्कार का एक और अवसर प्राप्त होगा।

सर्वोच्च योगी (४६-४७)

कृष्ण अष्टांग-योग का अपना विवरण योगियों की कर्मियों, ज्ञानियों और तपस्वियों से तुलना करते हुए समाप्त करते हैं। योगी सभी से श्रेष्ठ है और सर्वोच्च योगी वह भक्त है जो सदैव कृष्ण के विषय में ही सोचता है और पूर्ण श्रद्धा के साथ उनकी पूजा करता है।

विशेष टिप्पणियाँ और भगवद्गीता अध्याय १-६ के लिए चार्ट

अर्जुन द्वारा युद्ध न करने के पक्ष में दिए गए कारण
(अर्जुन विषाद योग)

1.	करूणा	1.27
2.	विषयभोग	1.30-35
3.	पापकर्मों के फल	1.36, 43-44, 2.5
4.	कुल का विनाश	1.37-43
5.	अनिर्णय	2.6-7

द्वितीय अध्याय का अवलोकन

अर्जुन की शरणागति	2.1-10
ज्ञान	2.11-30
	करूणा के तर्क का खंडन
कर्म-काण्ड	2.31-37
	विषयभोग के तर्क का खंडन
बुद्धियोग	2.38-53
कर्म-योग	पापमय कर्मों के फलों के तर्क का खंडन
स्थित-धीर मुनि	2.54-72

स्थित-धीर मुनि

लक्ष्य	2.55
वाणी	2.56-57
कैसे बैठता है	2.58-63
कैसे चलता है	2.64-72

कृष्ण अर्जुन के तर्कों का खंडन करते हैं

करूणा	**ज्ञान**	2.11-30
विषयभोग	**कर्मकाण्ड**	2.31-37
पापकर्मो के फल	**बुद्धि-योग**	2.38-53
कुल का विनाश	**कर्म-योग**	3.18-26

योग पद्धतियों का संक्षिप्त अवलोकन

कर्म-काण्ड	2.11-30
कर्म-योग	2.38-54 अध्याय 3
ज्ञान-योग	अध्याय 4-5
ध्यान-योग	अध्याय 6

योग सीढ़ी

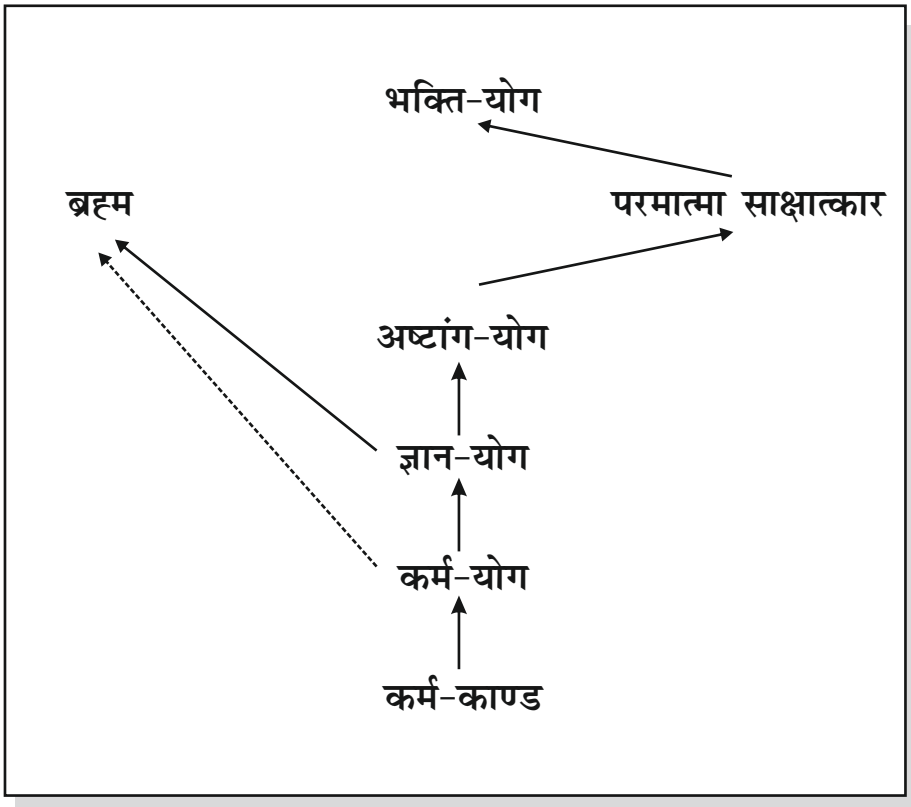

योग पद्धतियों के मध्य संबंध

कर्म-काण्ड	कर्म-योग
२.३१, ३.११, ३.१६	
कर्म-योग	ज्ञान-योग
५.२, ६.४६-४७	
ज्ञान-योग	ध्यान -योग
६.४६-४७	
ध्यान-योग	भक्ति-योग
६.३०-३१	

पूर्व-स्वाध्याय (आरंभिक स्वाध्याय)

बंद-पुस्तक मूल्यांकन के लिए प्रश्न व उपमाएँ

भगवद्गीता अध्याय १

1. धृतराष्ट्र के मामकाः कहने का क्या महत्व है? (1.1)
2. धृतराष्ट्र भयभीत क्यों है? (1.1)
3. संजय कुरूक्षेत्र की रणभूमि को कैसे देख सकता था?(1.1)
4. दुर्योधन के धीमता तव शिष्येन कहने का क्या अभिप्राय है? (1.3 प्रवचन)
5. द्यूत-क्रीड़ा के बाद भीम द्वारा ली गई प्रतिज्ञाओं का उल्लेख कीजिए। (1.4 सरेंडर अनटू मी)
6. दुर्योधन भीष्मदेव और द्रोण के पूर्ण सहयोग के प्रति आश्वस्त क्यों था? (1.11)
7. पाण्डवों की विजय के चार लक्षणों का उल्लेख कीजिए? (1.14-20 सरेंडर अनटू मी)
8. अर्जुन की ध्वजा पर हनुमान के उपस्थित रहने का क्या महत्व है? (1.20 प्रवचन)
9. गुडाकेश शब्द का क्या अर्थ है? (1.24)
10. छः प्रकार के आततायियों का उल्लेख कीजिए? (1.36)
11. एक कुल को क्रमश : विनाश की ओर ले जाने वाले चरणों का उल्लेख कीजिए? (1.39-42)

भगवद्गीता अध्याय २

12 अर्जुन द्वारा युद्ध न करने के लिए दिए गए तर्कों का उल्लेख कीजिए? (सरेंडर अनटू मी 1.27-2.7)
13. हिन्दी अथवा संस्कृत में भगवान के छः लक्षणों का उल्लेख कीजिए? (2.2)
14. क्षुद्रं हृदय दौर्बल्यं का क्या अर्थ है? (2.3)
15. शास्त्रों के विधान के अनुसार गुरू का त्याग कब किया जा सकता है? (2.5)
16. धर्म सम्मूढ़ चेताः का क्या अर्थ है? (2.7)
17. आत्मा का आकार कितना है और इसके अस्तित्व के क्या लक्षण हैं? (2.17)
18. शरीर में होने वाले छः प्रकार के बदलावों का वर्णन कीजिए? (2.20)
19. अणु आत्मा और विभु आत्मा का क्या अर्थ है? (2.20)
20. यज्ञ में पशुओं की बलि को हिंसक क्यों नहीं माना जाता? (2.31)
21. क्षत्रिय शब्द का क्या अर्थ हैं? (2.31)
22. स्वधर्म का क्या अर्थ है और दो प्रकार के स्वधर्म कौन से है? (2.31)
23. स्वर्ग द्वारं अपावृतं का क्या अर्थ है? (2.32)
24. प्रत्यवायः न विद्यते का क्या अर्थ है? (2.40)
25. व्यवसायात्मिका बुद्धि का क्या अर्थ है? (2.41)
26. वेद प्रमुखतः किसका वर्णन करते हैं? (2.45)
27. वैदिक संस्कृति का उद्देश्य सर्वोत्तम ढ़ंग से कैसे पूरा किया जा सकता है? (2.46)
28. प्रज्ञा शब्द का क्या अर्थ है? (2.54)
29. उत्तम वस्त्र पहने हुए व्यक्ति की मूर्खता हम कब तक नहीं पहचान पाते? (2.54)
30. परम दृष्ट्वा निवर्तते का क्या अर्थ है? (2.59)
31. श्लोक 2.61 में बताए गए मत्परः का उदाहरण कौन है? (2.61)
32. हिन्दी अथवा संस्कृत में आध्यात्मिक पतन के छः चरणों का उल्लेख कीजिए? (2.61-63)
33. ब्रह्मनिर्वाणमृच्छति का क्या अर्थ है? (2.72)

भगवद्गीता अध्याय ३

34. कृष्णभावनामृत को कई बार किस रूप में गलत समझा जाता है? (3.1)
35. निम्नलिखित का हिन्दी में अर्थ दीजिए:
    अ. तद् एकं वद्। (3.2)
    ब. मिथ्याचार: । (3.6)
    स. कर्म-योगं असक्त: स विशिष्यते । (3.7)
    द. तदर्थं कर्म कौन्तेय मुक्त संग:। (3.9)
    य. यो भुंक्ते स्तेन् एव स:। (3.12)
    र. अन्नाद् भवन्ति भूतानि । (3.14)
    ल. विकर्म (3.15)
36. एक पूर्णत: कृष्णभावनाभावित व्यक्ति वैदिक निर्देशों का पालन करने के लिए बाध्य क्यों नहीं होता? (3.17)
37. आचार्य का हिन्दी में अर्थ समझाइए। (3.21)
38. कृष्ण ने अपने निर्धारित कर्त्तव्यों का पालन क्यों किया? (3.23)
39. कृष्णभावनामृत अभ्यास शुरू करने के लिए कौन सी योग्यताएँ आवश्यक हैं? (3.26)
40. निराशीर् निर्ममो वाक्यांश का हिन्दी में अर्थ बताइए। (3.30)
41. नित्य वैरिणा वाक्यांश का हिन्दी में अर्थ बताइए। (3.39)
42. उन तीन स्थानों के नाम बताइए जहाँ काम विद्यमान रहता है। (3.40)

भगवद्गीता अध्याय ४

43. कम से कम कितने वर्ष पूर्व, भगवान कृष्ण ने ववस्वान को गीता का उपदेश दिया था? (4.1)
44. छ: प्रकार के अवतारों को सूचीबद्ध कीजिए। (4.8)
45. श्रद्धा से प्रेम तक के आठ चरणों को सूचीबद्ध कीजिए। (4.10)
46. एक पाषण्डी कौन होता है? (4.12)
47. मानव समाज के चार विभाजनों को मुख्यत: प्रभावित करने वाले गुणों को सूचीबद्ध कीजिए। (4.18)
48. 12 महाजनों के नाम लिखिए । (4.16)
49. परम सत्य के कार्य में प्रयोग किया जाने वाला जड़ पदार्थ क्या पुर्नप्राप्त कर लेता है? (4.24)
50. दीर्घायु के प्रति एक भक्त के रवैये का वर्णन कीजिए। (4.29)

भगवद्गीता अध्याय ५

51. प्रधान शब्द का हिंदी में अर्थ स्पष्ट कीजिए । (5.10)
52. फलं त्यक्तवा शांति आप्नोति नैष्ठिंक वाक्यांश का हिंदी में अर्थ स्पष्ट कीजिए। (5.12)
53. शरीर के नौ द्वारों की सूची दीजिए। (5.13)
54. विभु और अणु शब्द का हिंदी में अर्थ स्पष्ट कीजिए। (5.15)
55. पंडिता: सम दर्शिन: वाक्यांश का हिंदी में अर्थ स्पष्ट कीजिए। (5.18)
56. अष्टांग-योग के आठ अंगों की सूची दीजिए। (5.27)

भगवद्गीता अध्याय ६

57. मन कब सबसे बड़ा मित्र है और कब मन सबसे बड़ा शत्रु है? (6.6)
58. एकाकी व शुचौ देशे शब्दों का हिंदी में अर्थ स्पष्ट कीजिए। (6.11)
59. खाने, सोने, रक्षण व संभोग में अनाधिक्य करने का क्या परिणाम होता है? (6.17)
60. युक्त शब्द का हिंदी में अर्थ स्पष्ट कीजिए। (6.23)
61. प्रत्याहार शब्द का हिंदी में अर्थ स्पष्ट कीजिए। (6.23)
62. किस वस्तु से आसक्त योगी परम सिद्धि की अवस्था प्राप्त नहीं कर सकते? (6.23)
63. व्याख्या कीजिए कि एक असफल योगी की क्या गति होती है? (6.41-42)

भगवद्गीता अध्याय १-६ से चुनी हुई उपमाएँ

२.१

डूबते हुए मनुष्य के वस्त्रों के लिए करूणा करना मूर्खता होगी, उसी प्रकार अज्ञान-सागर में गिरे हुए मनुष्य को केवल उसके बाहरी पहनावे अर्थात स्थूल शरीर की रक्षा करके नहीं बचाया जा सकता।

२.२

परम सत्य के साक्षात्कार का अनुभव ज्ञान की तीन अवस्थाओं में किया जा सकता है - ब्रह्म, परमात्मा और भगवान। इसकी व्याख्या सूर्य के प्रकाश (धूप), सूर्य की सतह तथा सूर्यलोक स्वयं के उदाहरण से की जा सकती है।

२.१७

जिस प्रकार औषधि के सक्रिय अवयव का प्रभाव सम्पूर्ण शरीर में व्याप्त रहता है, उसी प्रकार आत्मा का प्रभाव समस्त शरीर में चेतना के रूप में विद्यमान रहता है और यही आत्मा के आस्तित्व का प्रमाण है।

२.२०

कभी-कभी हम बादलों के कारण आकाश में सूर्य को नहीं देख पाते, किंतु सूर्य का प्रकाश सदैव विद्यमान रहता है जो कि सूर्य की उपस्थिति का सूचक है। उसी प्रकार, चाहे हम हृदय के क्षेत्र में आत्मा को देखने में भले ही सक्षम न हों तथापि शरीर में व्याप्त चेतना के आधार पर आत्मा की उपस्थिति को समझ सकते हैं।

२.२२

जिस प्रकार मनुष्य पुराने वस्त्रों को त्यागकर नए वस्त्र धारण करता है, उसी प्रकार आत्मा पुराने तथा व्यर्थ शरीरों को त्यागकर नवीन भौतिक शरीर धारण करती है।

२.२१

यद्यपि हत्या करने वाले व्यक्ति को न्याय-संहिता के अनुसार मृत्युदण्ड दिया जाता है, किंतु न्यायधीश को इसके लिए दोषी नहीं ठहराया जा सकता है, क्योंकि वह न्याय-संहिता के प्रावधानों के अनुसार ही दूसरे व्यक्ति पर हिंसा किए जाने की सजा देता है। इसी प्रकार जब कृष्ण युद्ध के लिए आदेश देते हैं तो यह समझना चाहिए कि यह हिंसा परम न्याय के लिए है और कृष्ण के आदेशानुसार हिंसा में भाग लेने वाला अर्जुन किसी भी प्रकार के पाप का भागी नहीं बनेगा।

२.२०

कोई भी व्यक्ति चेतना की उपस्थिति मात्र से आत्मा की उपस्थिति को समझ सकता है। कभी-कभी हम बादलों या अन्य कारणों से आकाश में सूर्य को नहीं देख पाते, किंतु सूर्य का प्रकाश सदैव विद्यमान रहता है, अत: हमें विश्वास हो जाता है कि यह दिन का समय है।

२.२१

शल्य-क्रिया का प्रयोजन रोगी को मारना नहीं अपितु उसको रोगमुक्त कर स्वस्थ बनाना होता है। इसी प्रकार कृष्ण के आदेश पर युद्ध सभी के हित के लिए है और उसके पापफल की कोई संभावना नहीं है।

२.४१

जिस प्रकार वृक्ष की जड़ सींचने पर स्वत: ही पत्तियों और टहनियों में जल पहुँच जाता है, उसी प्रकार कृष्णभावनाभावित होने पर व्यक्ति प्रत्येक प्राणी की अर्थात् स्वयं की , परिवार की, समाज की, मानवता की सर्वोच्च सेवा कर सकता है।

२.५८

कछुआ किसी भी समय अपने अंगों को संकुचित कर समेट सकता है और पुन: विशिष्ट उद्देश्यों के लिए उन्हे प्रकट कर सकता है। इसी प्रकार एक कृष्णभावनाभावित व्यक्ति की इन्द्रियाँ भी केवल भगवान की विशिष्ट सेवाओं के लिए प्रयोग में आती हैं व अन्यथा उन्हें संकुचित कर लिया जाता है।

२.५८
इन्द्रियों की तुलना विषैले सर्पों से की गई है। एक भक्त को इन सर्पों के समान इंद्रियों को नियंत्रण में करने के लिए एक सपेरे की भाँति अत्यन्त प्रबल होना चाहिए। उसे अपनी इंद्रियों को स्वतंत्रतापूर्वक कार्य करने की तनिक भी छूट नहीं देनी चाहिए।

२.५९
विधि-विधानों द्वारा इंद्रिय-भोग को संयमित करने की विधि वैसी ही है जैसे किसी रोगी को कुछ विशिष्ट भोज्य पदार्थ खाने से प्रतिबंधित करना। किंतु इससे रोगी की न तो उस विशेष भोजन के प्रति रूचि समाप्त होती है और न ही वह इस प्रकार के प्रतिबन्ध को पसंद करता है।

२.६७
जिस प्रकार जल में तैरती नाव को प्रचण्ड वायु दूर बहा ले जाती है, उसी प्रकार विचरणशील इंद्रियों में से कोई एक, जिस पर मन केंद्रित हो जाता है, मनुष्य की बुद्धि को हर लेती है।

२.७०
जैसे समुद्र स्वयं में निरन्तर प्रवेश करने वाली नदियों के जल से भरा जाता रहता है, किंतु विचलित नहीं होता व स्थिर बना रहता है, उसी प्रकार एक कृष्णभावनाभावित व्यक्ति इच्छाओं के निरन्तर प्रवाह के मध्य भी अविचलित बना रहता है।

३.१४
जब कोई महामारी फैलती है तो इसके आक्रमण से रक्षा के लिए व्यक्ति को रोगाणुरोधी टीका लगाया जाता है। इसी प्रकार भगवान विष्णु को अर्पित करके ग्रहण किया जाना वाला भोजन हमें समस्त प्रकार के भौतिक प्रभावों के प्रति पर्याप्त रूप से प्रतिरोधी बनाता है।

३.३१
कोषाध्यक्ष अपने स्वामी के लिए लाखों रूपये गिन सकता है, किंतु इसमें से वह अपने लिए एक पैसे पर भी दावा नहीं करता । इसी प्रकार व्यक्ति को यह समझना चाहिए कि इस संसार में किसी भी व्यक्ति का कुछ भी नहीं है, अपितु सभी वस्तुएँ परम भगवान की संपत्ति हैं।

३.३४
मनुष्य को अनासक्त रहकर इन यम-नियमों का पालन करना होता है, क्योंकि नियमों के अन्तर्गत इंद्रिय-तृप्ति का अभ्यास भी उसे पथ-भ्रष्ट कर सकता है, ठीक वैसे ही जैसे राजमार्ग पर भी दुर्घटना का संभावना बनी रहती है।

३.३७
जिस तरह इमली के सम्पर्क में आने पर दूध दही में परिवर्तित हो जाता है, उसी प्रकार ईश्वर-प्रेम का भाव काम में परिणित हो जाता है।

३.३९
मनुस्मृति में कहा गया है कि कितना भी विषय-भोग क्यों न किया जाए, काम की कभी तृप्ति नहीं हो सकती, ठीक वैसे ही जैसे निरन्तर ईंधन डालते रहने पर अग्नि कभी नहीं बुझती ।

४.६
वस्तुत: उनका आविर्भाव और तिरोभाव सूर्य के उदय तथा अस्त होने के समान है, जो हमारी आँखों के सामने विचरण करता रहता है और अंत में हमारी दृष्टि से ओझल हो जाता है। जब सूर्य हमारी दृष्टि से ओझल हो जाता है तो हम सोचते हैं कि सूर्य अस्त हो गया है और जब वह हमारे नेत्रों के समक्ष रहता है तो हम सोचते है कि वह क्षितिज में हैं। वस्तुत: सूर्य सदैव ही अपने नियत स्थान पर विद्यमान है।

४.१४
भगवान भौतिक क्रिया-प्रतिक्रिया से पृथक रहते हैं। उदाहरणार्थ, पृथ्वी पर उगने वाली वनस्पतियों के उगने के लिए वर्षा उत्तरदायी नहीं है, यद्यपि वर्षा के बिना वनस्पतियों का उगना संभव नहीं है।

४.२१
जिस प्रकार रख-रखाव के लिए मशीन के पुर्जे को तेल (स्नेहक) व सफाई की आवश्यकता पड़ती है, उसी प्रकार एक कृष्णभावनाभावित व्यक्ति कर्म के द्वारा अपना निर्वाह करता रहता है, जिससे वह भगवान की दिव्य प्रेममयी भक्ति करने के लिए ठीक बना रहे। अत: वह अपने प्रयासों के फलों से पूर्णत: मुक्त व सुरक्षित रहता है।

४.२४
उदाहरण के लिए, यदि कोई रोगी दूध की बनी वस्तुओं के अधिक सेवन से पेट की गड़बड़ी से ग्रस्त हो जाता है तो उसे उपचार के लिए दूध से बनी एक अन्य वस्तु, दही का सेवन कराया जाता है। भौतिकता में ग्रस्त बद्धजीव का उपचार कृष्णभावनामृत के द्वारा ही किया जा सकता है, जिसकी यहाँ गीता में संस्तुति की जा रही है।

५.१०
जो व्यक्ति कर्मफलों को परमेश्वर को समर्पित करके आसक्ति रहित होकर अपना कर्म करता है, वह पापकर्मों से उसी प्रकार अप्रभावित रहता है, जिस प्रकार कमलपत्र जल के स्पर्श से बचा रहता है।

५.१५
भगवान परमात्मा के रूप में जीवात्मा के सतत संगी रहते हैं, फलत: वे प्रत्येक जीव की इच्छाओं को उसी तरह से समझते हैं जिस तरह फूल के निकट रहने वाला फूल की सुगन्ध का अनुभव कर सकता है।

६.३४
प्रत्येक व्यक्ति इस भौतिक शरीर रूपी रथ पर आरूढ़ है और बुद्धि इसकी सारथी है। मन लगाम है तथा इन्द्रियाँ घोड़े हैं।

६.३४
मन इतना प्रबल तथा हठी है कि इसे अपनी बुद्धि से भी जीत पाना कठिन हो जाता है जिस प्रकार एक घातक संक्रमण को कभी-कभी अच्छी से अच्छी औषधि द्वारा भी वश में नहीं किया जा सकता।

इकाई १ खुली-पुस्तक मूल्यांकन प्रश्न

प्रश्न १

भगवद्गीता की भूमिका में प्रकट प्रभुपाद के भाव और / अथवा अभियान के तीन पहलुओं को सूचीबद्ध कीजिए, और अपने शब्दों में इस्कॉन के लिए इन पहलुओं के महत्व पर टिप्पणी कीजिए।

(भाव और अभियान)

प्रश्न २

निम्नलिखित पर श्रील प्रभुपाद के तात्पर्यों के कथनों, उपमाओं व श्लोकों के सन्दर्भ में अपने शब्दों में चर्चा कीजिए।

(भगवद्गीता 2.21, 27)

- हिंसा कब न्यायोचित होती है?
- कृष्ण जो सर्वप्रेमी हैं, ने अर्जुन को युद्ध के लिए क्यों उकसाया?
- धर्म के नाम पर आतंकवाद उचित है या अनुचित?

(प्रचार में उपयोग)

प्रश्न ३

भगवद्गीता 2.6-11 का सन्दर्भ लेकर चर्चा कीजिए कि अर्जुन की दुविधा से सीखे जा सकने वाले सामान्य सिद्धान्त आपके स्वयं के कृष्णभावनामृत अभ्यास / साधना में कैसे सम्बन्धित व उपयोगी हैं।

(व्यक्तिगत उपयोग)

प्रश्न ४

भगवद्गीता 2.54-68 और 3.4-8 से उदाहरणों, उपमाओं, तात्पर्यों व श्लोकों का सन्दर्भ लेकर अपने शब्दों में कृष्णभावनामृत द्वारा इंद्रिय-संयम/नियंत्रण की विधि की व्याख्या कीजिए।

- यह निम्न से किस प्रकार सम्बन्धित है :
- कुरूक्षेत्र की युद्धभूमि में अर्जुन की परिस्थिति
- आपकी स्वयं की कृष्णभावनामृत साधना

(व्यक्तिगत उपयोग)

प्रश्न ५

अपने शब्दों में वर्णन कीजिए कि कैसे कृष्णभावनामृत वर्णाश्रम धर्म के परे व उससे दिव्य है। अपने उत्तर में भगवद्गीता अध्याय 2 व 3 तथा श्रील प्रभुपाद के प्रवचनों से उचित सन्दर्भ प्रस्तुत कीजिए। व्याख्या कीजिए कि किस प्रकार वर्णाश्रम धर्म की स्थापना व सदुपयोग कृष्णाभावनामृत में सहयोग कर सकता है।

(समझ)

प्रश्न ६

भगवद्गीता के श्लोकों, तात्पर्यों व श्रील प्रभुपाद के प्रवचनों का सन्दर्भ देते हुए अपने शब्दों में कर्म-कांड, कर्म-योग, ज्ञान-योग व ध्यान-योग की पद्धतियों का वर्णन कीजिए। अपने उत्तर में उद्धृत श्लोकों से कुछ विशिष्ट संस्कृत शब्दों की ध्यानपूर्वक व्याख्या कीजिए।

(समझ)

प्रश्न ७

भगवद्गीता 3.36-47 में कृष्ण द्वारा काम के विश्लेषण से अपने शब्दों में कुछ सामान्य सिद्धान्तों को चिन्हित कीजिए और इन सिद्धांतों का आपके अपने कृष्णभावनामृत अभ्यास में क्या उपयोग है, इसपर चर्चा कीजिए। अपने उत्तर में ऊपर उल्लेखित श्लोकों के खंड से कुछ संस्कृत शब्दों व वाक्यांशों तथा तात्पर्य में दी गई उपमाओं के सदंर्भों का समावेश कीजिए।

(व्यक्तिगत उपयोग)

प्रश्न ८

भगवद्गीता अध्याय 2-6 और प्रभुपाद के प्रवचनों की टिप्पणियों के आधार पर सन्दर्भ देते हुए अपने शब्दों में अन्य योग पद्धतियों की तुलना में भक्ति की श्रेष्ठता को स्थापित कीजिए।

अपने उत्तर में निम्नलिखित का वर्णन कीजिए :

- भक्ति-योग के अतिरिक्त अन्य योग पद्धतियों की कलियुग में अव्यावहारिकता।
- किस प्रकार भक्ति में अन्य योग पद्धतियों का अभ्यास किए बिना ही भक्ति योग का अभ्यास किया जा सकता है।

प्रश्न ९

अपने शब्दों में व्याख्या कीजिए कि किस प्रकार कृष्ण भौतिक प्रकृति से बद्ध व प्रभावित नहीं होते हैं। अपने उत्तर में भगवद्गीता 2.11-12 व 4.5-6 श्लोकों व तात्पर्यों का सन्दर्भ दीजिए।

(समझ)

प्रश्न १०

भगवद्गीता 4.14, 5.14-15 के संस्कृत श्लोकों, उपमाओं व तात्पर्यों के सन्दर्भ लेते हुए अपने शब्दों में स्पष्ट कीजिए कि बद्ध जीवात्माओं के कष्ट के लिए कौन उत्तरदायी होता है?

(समझ)

इकाई 2 भगवद्गीता अध्याय 7 - 12

अध्याय 7 ज्ञान-विज्ञान योग

मय्यासक्त मनः -कृष्ण से सुनें	1-7
प्रत्येक वस्तु के स्रोत स्वरूप कृष्ण	4-12
मम् माया दुरत्यया	13-14
कृष्ण के प्रति कौन आत्मसमर्पण करता है	15-19
देवता पूजक व निर्विशेषवादी	20-25
इच्छा-द्वेष-पुण्य-कर्मणां	26-30

अध्याय 8 अक्षर-ब्रह्म योग

कृष्ण अर्जुन के प्रश्नों का उत्तर देते हैं	1-4
कृष्ण का स्मरण करना	5-9
योग-मिश्र-भक्ति	10-13
शुद्ध भक्तिमय सेवा	14-16
भौतिक व आध्यात्मिक जगतों की तुलना	17-22
परम की प्राप्ति करना	23-28

अध्याय 9 राज-विद्या राज-गुह्य योग

राज-विद्या	1-3
कृष्ण का भौतिक जगत से सम्बन्ध	4-10
पूजा न करने वाले व पूजा करने वाले	11-19
देवता पूजक व भक्त	20-28
अनन्य-भक्ति योग	27-34

अध्याय 10 विभूति-विस्तार योग

कृष्ण समस्त चराचर जगत के स्रोत हैं	1-7
चतुः श्लोकी गीता	8-11
कृष्ण के ऐश्वर्य	19-42

अध्याय 11 विश्वरूप-दर्शन योग

भगवान के विराट रूप का विवरण	1-31
एक माध्यम बन जाएँ	32-34
अर्जुन की प्रार्थनाएँ	35-46
कृष्ण का द्विभुज परम रूप	47-55

अध्याय 12

निर्वेशेषवाद से श्रेष्ठ भक्ति	1-7
भक्ति के उत्तरोत्तर चरण	8-12
कृष्ण को प्रिय गुण	13-20

अध्याय ७

भगवद्गीता अध्याय ७-१२ का संक्षिप्त अवलोकन

भगवद्गीता के पहले छः अध्याय मुख्यतः कर्म-योग का, मध्य के छः अध्याय मुख्यतः भक्ति-योग का व अंतिम छः अध्याय ज्ञान-योग का विश्लेषण करते हैं। कृष्ण ने छठवें अध्याय में वर्णन किया है कि उनसे सर्वाधिक अंतरंग रूप से जुड़ा हुआ योगी अन्तःकरण में उनका चिंतन करता रहता है। अब, सातवाँ अध्याय वर्णन करता है कि कैसे व्यक्ति इस प्रकार का कृष्णभावनाभावित स्तर प्राप्त कर सकता है। भक्तिमय सेवा में संलग्न हो कर व्यक्ति को दृढ़ श्रद्धा प्राप्त होती है, वह दृढ़-व्रत बन जाता है और उसे यह दृढ़ विश्वास हो जाता है कि ऐसे सेवा मात्र करते रहने से उसके सभी उद्देश्य सफल होंगे ।

कृष्ण को उनके विषय में श्रवण से पूर्णतः समझना (१-७)

इस अवस्था को कैसे प्राप्त करें, इसका विवेचन कृष्ण सातवें अध्याय में करते हैं। कृष्ण अर्जुन से अनुरोध करते हैं कि वह उनके द्वारा स्वयं के विषय में बताए जा रहे ज्ञान (श्लोक 1-3) को अपना मन उनमें पूर्णतः आसक्त करते हुए सुने । वे वर्णन करते हैं कि कैसे वे ही भौतिक व आध्यात्मिक, समस्त वस्तुओं के स्रोत हैं (श्लोक 4-7)।

कृष्ण को भौतिक शक्तियों व आध्यात्मिक शक्तियों के स्रोत के रूप में समझना (८-१२)

श्लोक 8-12 में कृष्ण बताते हैं कि वे ही समस्त वस्तुओं के सार हैं। जैसा कि श्लोक 4-12 में वर्णन किया गया है, यदि कृष्ण ही सब का स्रोत व सार हैं, तो भी कुछ लोग उनको पूर्ण पुरूषोत्तम भगवान के रूप में स्वीकार क्यों नहीं करते हैं?

तीन गुणों के नियंता कृष्ण-अतएव आत्मसमर्पण करें (१३-१४)

श्लोक 13-14 व्याख्या करते हैं कि कैसे जीवात्माएँ तीन गुणों द्वारा मोहित व नियंत्रित होती हैं, किंतु कृष्ण के प्रति आत्मसमर्पण कर वे इन गुणों के परे जाने में सक्षम हो जाती हैं, क्योंकि कृष्ण गुणों के नियंता हैं।

चार प्रकार के अधार्मिक व्यक्ति, जो कृष्ण के प्रति आत्मसमर्पण नहीं करते और चार प्रकार के धार्मिक व्यक्ति जो कृष्ण के प्रति आत्मसमर्पण करते हैं (१५-१९)

प्रकृति के नियमों से मुक्त होने के लिए मानव जाति के नेतृत्व कर्त्ताओं ने कई वर्षों से योजनाएँ बना कर अथक प्रयास किया है। यदि कृष्ण के प्रति समर्पण करके यह मुक्ति संभव है, तो फिर लोग इस पद्धति को स्वीकार क्यों नही करते? श्लोक 15 चार प्रकार के ऐसे अयोग्य व्यक्तियों का वर्णन करता है जो कृष्ण के प्रति समर्पण नहीं करते और कभी-कभार भौतिक लाभ प्राप्ति के लिए स्वयं को नेताओं के रूप में प्रस्तुत करते हैं। श्लोक 16-19 चार प्रकार के व्यक्तियों का वर्णन करता है जो कृष्ण के प्रति समर्पण करते हैं और कैसे ज्ञानी उनमें सवश्रेष्ठ है क्योंकि वह भौतिक सुख की कामना नहीं करता।

देवी-देवताओं के उपासक और निराकारवादी, जिनका समर्पण पथभ्रष्ट है (२०-२५)

भौतिक लाभ के लिए देवी-देवताओं की उपासना करने वाले अल्प-बुद्धि लोगों के विषय में श्लोक 20-23 वर्णन करते हैं। श्लोक 24-25 कृष्ण के निराकार पक्ष के प्रति समर्पण करने वाले निराकारवादियों की व्याख्या करते हैं। वे कृष्ण को नहीं देख सकते क्योंकि कृष्ण स्वयं को उनकी दृष्टि से छिपा लेते हैं।

जीवात्मा का मोहित होना और कृष्ण का ज्ञान (२६-३०)

कृष्ण सर्वज्ञ हैं अतः इच्छा और द्वेष से उत्पन्न होने वाले द्वंद्व से मोहित और भ्रम में जन्में मूर्ख जीवों से भिन्न हैं। पवित्र व धार्मिक व्यक्ति, जो भ्रम से उत्पन्न दुविधाओं से मुक्त हो चुके हैं, दृढ़ता व श्रद्धा से भक्ति में संलग्न हो कर मुक्ति प्राप्त करते हैं। वे कृष्ण के विषय में जानते हैं कि कृष्ण ही अधिभूत, अधिदैव व अधियज्ञ हैं।

अध्याय ८

अध्याय 7 के अंत में कृष्ण द्वारा प्रयोग किए गए छः विशेषणों के विषय में अर्जुन जिज्ञासा करता है- ब्रह्म, अध्यात्म, कर्म, अधिभूत, अधिदैव और अधियज्ञ ।

कृष्ण अर्जुन के प्रश्नों का उत्तर देते हैं (१-४)

इस अध्याय में कृष्ण अर्जुन के प्रश्नों का उत्तर देते हैं और योग सिद्धांत व शुद्ध भक्तिमय सेवा के विषय में चर्चा करते हैं। श्लोक 1-4 में कृष्ण अर्जुन के प्रथम सात प्रश्नों के उत्तर देते हैं।

कृष्ण का स्मरण (५-९)

श्लोक 5-8 में कृष्ण उसके आठवें प्रश्न का उत्तर देते हुए उस व्यक्ति के गंतव्य/गति के विषय में बताते हैं जो मृत्यु के समय कृष्ण के बारे में सोचता है। कृष्ण समझाते हैं कि व्यक्ति को सदैव उनके विषय में सोचते हुए सक्रिय भक्तिमय सेवा में संलग्न रहना चाहिए। ऐसी साधना व्यक्ति को मृत्यु के समय कृष्ण का चिंतन करने और उनके भाव को प्राप्त करने में सहायता करती है। कृष्ण श्लोक 9 में उन पर ध्यान केंद्रित करने के कुछ मार्ग बताते हैं।

योग-मिश्र भक्ति (१०-१३)

एक योगी मृत्यु के समय ऊँ का उच्चारण तथा कृष्ण का स्मरण करने से भी कृष्ण की प्राप्ति कर सकता है। श्लोक 10-13 में योग -मिश्र भक्ति का विवरण दिया गया है।

शुद्ध भक्तिमय सेवा (१४-१६)

कृष्ण अर्जुन से बिना किसी विक्षेप/विचलन के उनका स्मरण करते हुए शुद्ध भक्तिमय सेवा में संलग्न रहने का अनुरोध करते हैं। इस प्रकार की सेवा में कोई बाधा नहीं आ सकती और इससे व्यक्ति सहज ही कृष्ण को प्राप्त कर लेता है।

भौतिक और आध्यात्मिक जगतों की तुलना (१७-२२)

भौतिक जगत दुःखमय और अस्थाई है। इसका प्रदर्शन जगत की उत्पत्ति व विनाश के सतत् चक्र से हो जाता है। इस विवरण को सुनकर व्यक्ति इस जगत से वैराग्य का अनुभव लब्ध करता है। श्लोक 20-22 में आध्यात्मिक जगत की शाश्वत प्रकृति व साथ ही साथ उसे प्राप्त करने की विधि, कृष्ण की भक्तिमय सेवा, का वर्णन किया गया है।

परम भगवान की प्राप्ति में भक्ति की सर्वोच्च स्थिति व महिमा (२३-२८)

श्लोक 23-26 में भगवान कर्मियों व ज्ञानियों द्वारा इस संसार का त्याग कर शरीर छोड़ने के विभिन्न तरीकों का वर्णन करते हैं। किंतु कृष्ण के भक्तों को इन मार्गों की चिंता करने की कोई आवश्यकता नहीं होती क्योंकि भक्तिमय सेवा में संलग्न मात्र रहकर वे सभी मार्गों के लाभों को प्राप्त कर लेते हैं और अंततः परम धाम को प्रयाण करते हैं (श्लोक 27-28)भगवद्गीता के मध्य के छः अध्यायों का भक्तों के संग में श्रवण करने से व्यक्ति को समस्त यज्ञों, तपस्याओं आदि का लाभ मिलता है और व्यक्ति अनर्थ-निवृत्ति से कृष्ण के प्रति शुद्ध प्रेम की ओर अग्रसर होता जाता है।

अध्याय ९

भगवद्गीता के आंरभिक अध्यायों में आत्मा और शरीर के मध्य के अंतर सम्बन्धी गुह्य ज्ञान की चर्चा की गई है। अध्याय सात व आठ और अधिक गुह्य हैं क्योंकि इनमें भक्तिमय सेवा का वर्णन आता है जो हमें कृष्णभावनामृत के विषय में ज्ञान प्रदान करती है। अध्याय 9 सर्वाधिक गुह्य है क्योंकि यह शुद्ध, अमिश्रित भक्तिमय सेवा का वर्णन करता है। आठवें अध्याय में भगवान कृष्ण वर्णन कर चुके हैं कि अनन्य भक्त प्रकाश व अंधकार दोनों प्रकार के मार्गों के परे चला जाता है। अब कृष्ण वर्णन करेंगे कि इस प्रकार का अनन्य भक्त कैसे बना जाए। इसका पहला चरण कृष्ण के विषय में श्रवण करना है।

कृष्ण के विषय में श्रवण करना - योग्यताएँ व अयोग्यताएँ (१-३)

एक ईर्ष्याविहीन व्यक्ति श्रवण द्वारा परम सत्य के विषय में सर्वाधिक गहन ज्ञान अर्जित कर सकता है और भक्तिमय सेवा की विधि द्वारा कृष्ण का प्रत्यक्ष अनुभव कर सकता है। किंतु एक अश्रद्धालु/श्रद्धाविहीन व्यक्ति को बारम्बार जन्म और मृत्यु के चक्र में लौटना पड़ना है। (श्लोक 1-3)

भौतिक जगत से कृष्ण का अचिंत्य सम्बन्ध (४-१०)

कृष्ण अपनी भौतिक शक्ति द्वारा इस सम्पूर्ण जगत में व्याप्त रहते हैं, इसकी रचना व इस का विनाश करते हैं। यद्यपि कृष्ण परम नियंत्रक हैं तथापि यह भौतिक जगत स्वतंत्र रूप से कार्य करता है और इस प्रकार कृष्ण उदासीन व अनासक्त रहते हैं।

उपासक व उपासना न करने वाले (११-१९)

कृष्ण शुद्ध भक्तों की निराकारवादियों, देवी-देवताओं के उपासकों व विश्व-रूप/विराट रूप के उपासकों से तुलना करते हैं। वे विराट-रूप पर ध्यान करने का मार्ग भी बताते हैं।

देवी-देवताओं के उपासकों की भक्तों से तुलना (२०-२८)

देवी-देवताओं के उपासक कृष्ण को परम भोक्ता के रूप में न पहचान कर उनका तिरस्कार करते हैं अत: यह उनके पतन का कारण बनता है। किंतु कृष्ण भक्त की रक्षा स्वयं भगवान करते हैं और स्वयं का संग प्राप्त करने में वे भक्तों की सहायता करते हैं। भक्ति-भाव से भक्तों द्वारा स्वयं को अर्पित भोग को भगवान स्वीकार करते हैं। श्लोक 26 में भगवान शुद्ध भक्तिमय सेवा का वर्णन करते हैं।

कृष्ण की प्रत्यक्ष अराधना की महिमा (२७-३४)

कृष्ण अर्जुन को कर्मार्पणम् अर्थात् सभी गतिविधियों का फल उन्हें अर्पित करने का सुझाव देते हैं जिसका परिणाम कर्मों के बन्धन से मुक्ति में होगा (श्लोक 27-28)। कृष्ण, अन्यों के साथ अपने संबंध की तुलना में, अपने भक्तों के साथ अपने सबंध की व्याख्या करते हैं, किस प्रकार वे अपने भक्त के मित्र बन जाते हैं और किसी आकस्मिक दुर्घटना के कारण पतन के बावजूद उनकी रक्षा करते हैं। वे जन्म के आधार पर पक्षपात किए बिना सभी को आश्रय देते हैं और प्रत्येक को भगवद्धाम की प्राप्ति का सुनिश्चित आश्वासन देते हैं। अंतत: वे निष्कर्षस्वरूप अपनी भक्तिमय सेवा में संलग्न होने का परम गुह्य ज्ञान प्रदान करते हैं। श्लोक 34 अत्यन्त आवश्यक व महत्वपूर्ण है और भगवद्गीता 18.66 में इसकी पुनरावृत्ति की गई है।

अध्याय १०

कृष्ण ने पहले ही भक्तिमय सेवा का विवरण दे दिया है, विशेषकर अध्याय 9 के अंत में। अपने भक्तों में और अधिक भक्ति-भाव उत्पन्न करने में सहायता के लिए, कृष्ण अब अपनी विभूतियों (ऐश्वर्यों) का वर्णन करते हैं। (अध्याय 7 व 9 में, वे अपनी शक्तियों के ज्ञान का वर्णन कर चुके हैं।)

कृष्ण सभी वस्तुओं के उद्गम (स्रोत) हैं (१-७)

अध्याय 10 में कृष्ण अपनी विभूतियों (ऐश्वर्यों) के विषय में विशेष रूप से बताते हैं और इस प्रकार स्वयं को परम भगवान, समस्त कारणों के कारण, के रूप में प्रकट करते हैं।

चतु: श्लोकी गीता (८-११)

भगवद्गीता के सार का 8-11 श्लोकों में कथन किया गया है। कृष्ण की समस्त विभूतियों का सारांश आठवें श्लोक में बताया गया है। कृष्ण की महानता के विषय में जानकर, भक्त उनके प्रति प्रेम विकसित व जागृत करते हैं और उनकी भक्तिमय सेवा में संलग्न हो जाते हैं। चूंकि उनका मन भगवान कृष्ण में दृढ़ता से केंद्रित व निहित रहता है, भक्त सदैव कृष्ण विषयक कथाओं में आनंद लेते हैं और उनके बिना अपना जीवन निर्वाह करना भी दुष्कर समझते हैं (श्लोक 9)। जब कृष्ण भक्तों की उनकी सेवा करने की तीव्र उत्कंठा व व्यग्रता को देखते हैं, तो हृदय के भीतर से उन्हें ज्ञान प्रदान कर उनसे भावों का आदान-प्रदान करते हैं (श्लोक 10-11)।

अर्जुन की स्वीकृति और निवेदन (१२-१८)

भगवद्गीता के चार सर्वप्रमुख व महत्वपूर्ण श्लोकों को सुनकर अर्जुन का मन समस्त प्रकार के संदेहों से मुक्त हो जाता है और वह कृष्ण को परम भगवान के रूप में स्वीकार कर लेता है। तत्पश्चात् वह कृष्ण की विभूतियों व ऐश्वर्यों को सुनने की अपनी तीव्र उत्कंठा व्यक्त करता है जिससे वह सदैव उनके विषय में सोच सके।

कृष्ण की विभूतियाँ (ऐश्वर्य) (१९-४२)

अर्जुन के निवेदन के प्रत्युत्तर में, कृष्ण अपनी असीम, सर्वव्यापी विभूतियों में से सर्वाधिक प्रमुख का वर्णन करते हैं। कृष्ण विभिन्न वस्तुओं या जीवात्माओं के समूहों को सूचीबद्ध करते हुए बताते हैं कि वे ही उनका सार अथवा प्रत्येक समूह के सर्वप्रमुख सदस्य हैं। अपने 82 ऐश्वर्यों के विषय में बताने के बाद, कृष्ण सारांश स्वरूप कहते हैं कि ये ऐश्वर्य उनके यश की एक झलक मात्र की सूचना देते हैं क्योंकि वे अपनी संपूर्ण शक्ति के एक अंश मात्र से समस्त ब्रह्माण्ड में व्याप्त हो कर इसे धारण करते हैं।

अध्याय ११

ग्यारहवें अध्याय में, कृष्ण स्वयं सर्वोच्च भगवान हैं, यह सिद्ध करते हैं, और साथ ही यह मानदण्ड भी स्थापित करते हैं कि यदि कोई स्वयं के भगवान होने का दावा करता है तो उसे एक विराट रूप दिखाना अनिवार्य है।

अर्जुन का निवेदन और कृष्ण द्वारा अपने विराट रूप का वर्णन (१-८)

कृष्ण द्वारा यह सुनकर कि वह समस्त ब्रह्माण्ड में सर्वत्र व्याप्त हैं व उनके धारणकर्त्ता हैं, अर्जुन भगवान के उस सर्वव्यापी रूप को देखने की इच्छा प्रकट करते हैं। कृष्ण पहले अपने विराट-रूप का वर्णन करते हैं और फिर का अर्जुन को उसे देखने के लिए आवश्यक दृष्टि प्रदान करते हैं।

संजय द्वारा विराट रूप का वर्णन (९-३१)

कृष्ण के विराट-रूप को आश्चर्यपूर्ण ढंग से देखने के बाद, अर्जुन अपने द्वारा देखे गए दृश्य का हिचकिचाते हुए वर्णन करने लगता है। अर्जुन सर्वप्रथम एक ही स्थान पर अपरिमेय व प्रकाशमान सम्पूर्ण अस्तित्व को विद्यमान देखता है। श्लोक 19 से आरंभ करके, अर्जुन कृष्ण के भयावह, सर्व-विनाशकारी-रूप को देखता है, जो दोनों पक्षों के समस्त सैनिकों का भक्षण कर रहा है। कृष्ण ने पहले ही अर्जुन को वचन दिया था कि अर्जुन वह सब देखेगा, जिसे देखने में उसकी रूचि हैं अतएव अर्जुन युद्ध का भावी परिणाम देखता है, जिसमें दोनों पक्षों के अधिकांश सैनिक मारे जाते हैं (श्लोक 26-30)। तब वह कृष्ण से पूछता हैं, ''आप कौन हैं? आपका लक्ष्य क्या है?''

कृष्ण द्वारा एक निमित्त मात्र बनने का आदेश देना (३२-३४)

कृष्ण समस्त संसारों के विनाशकर्त्ता, अपने काल-रूप का वर्णन करते हैं और अर्जुन से सभी योद्धओं की अटल मृत्यु से अवगत होने व उनका निमित्त मात्र बन जाने का निवेदन करते हैं।

अर्जुन की प्रार्थनाएँ (३२-३४)

भय से काँपते हए, अर्जुन विराट-रूप से प्रार्थना करता है। वह, अज्ञानवश, पहले भगवान के साथ मित्रवत् किए गए अपने व्यवहार के लिए भी क्षमा याचना करता है।

केवल शुद्ध भक्त ही कृष्ण के परम द्विभुज रूप का दर्शन कर सकते हैं (४७-५५)

अर्जुन की भयपूर्ण प्रार्थनाओं के उत्तर में, पुनः अपने मूल द्विभुज रूप में लौटने से पहले कृष्ण उसे अपना चतुर्भुज रूप दिखाते हैं। कृष्ण अर्जुन को सूचित करते हैं कि उनका द्विभुज रूप सर्वोच्च है और केवल शुद्ध, अमिश्रित भक्तिमय सेवा में संलग्न उनके भक्तों द्वारा ही समझे जा सकने योग्य हैं।

अध्याय १२

भगवद्गीता के मध्य के छः अध्यायों का आरम्भ कृष्ण द्वारा भक्ति की चर्चा से होता है और अर्जुन इनका समापन भी उसी प्रकार से चाहता है। कृष्ण के अद्भुत दिव्य विराट – रूप का साक्षी बनने के पश्चात अर्जुन एक ऐसे भक्त के रूप में अपनी स्थिति का अवलोकन कर सुनिश्चित होना चाहता है, जो कृष्ण के लिए कर्म करता है; उन ज्ञानियों की तुलना में ठीक विपरीत, जो कर्म का परित्याग कर देते हैं

भक्ति निराकारवाद से श्रेष्ठ है (१-७)

अर्जुन कृष्ण से पूछता है- क्या अधिक श्रेयस्कर है, भक्तिमय सेवा के माध्यम से कृष्ण की आराधना करना अथवा उनके निराकार अव्यक्त पक्ष की आराधना करना? कृष्ण तत्काल ही उत्तर देते हैं , यह कहकर कि उनकी व्यक्तिगत सेवा सर्वोच्च है। अव्यक्त पक्ष का आराधक कम परिपूर्ण है, और सीधे कृष्ण की आराधना करने वाले की तुलना में अत्यधिक कष्ट पाता है। भक्ति का मार्ग सरल है और कृष्ण स्वयं अपने भक्त का भौतिक जीवन से उद्धार करते हैं।

भक्ति के उत्तरोत्तर स्तर (८-१२)

कृष्ण शुद्ध भक्तिमय सेवा की ओर अग्रसर होने वाले मार्ग का व्युत्क्रम दिशा से वर्णन करते हैं। वह पहले सुझाव देते हैं कि भक्त को निरन्तर अपना मन उन पर ध्यान में दृढ़ता से केंद्रित करना चाहिए। यदि वह ऐसा नहीं कर सकता, तो उसे भक्ति योग के विधि-विधानों का पालन कर स्वयं का शुद्धिकरण करना चाहिए। यदि यह भी अत्यन्त दुष्कर है, तो व्यक्ति को कर्म-योग में संलग्न होकर अपने कर्म-फलों को कृष्ण को अर्पित करने हेतु उनका परित्याग करना चाहिए। यदि व्यक्ति इस साधना का भी पालन नहीं कर सकता, तो उसके लिए अप्रत्यक्ष मार्ग का पालन ही उत्तम होगा, जिसका आरंभ कर्म के परित्याग से होता है और जो ज्ञान व ध्यान की दिशा में आगे बढ़ता है।

गुण जो व्यक्ति को कृष्ण का प्रिय बनाते हैं (१३-२०)

भक्ति के चरणों का वर्णन करने के बाद अब कृष्ण उन दिव्य गुणों को गिनाते हैं जो एक भक्ति योगी को स्वतः प्राप्त हो जाते हैं और जो भक्त को कृष्ण का प्रिय बनाते हैं। इन गुणों के विषय में वर्णन अध्याय 12 की विषय-वस्तु को और विकसित कर उसे सुगठित बनाता है : भक्ति ही आध्यात्मिक उन्नति का सर्वोत्तम मार्ग है। कृष्ण अंततः निष्कर्षस्वरुप कहते हैं कि कोई भी, जो श्रद्धापूर्वक उन्हें सर्वोच्च लक्ष्य मान कर भक्तिमय सेवा के मार्ग का पालन करता है, उन्हें अत्यन्त प्रिय हो जाता है। इस प्रश्न का – कि कौन श्रेष्ठ है, सगुणोपासक या निर्गुणोपासक – समाधान हो जाता है और भक्तिमय सेवा को आध्यात्मिक साक्षात्कार की सर्वोच्च विधि के रूप में स्वीकार कर लिया जाता है।

भगवद्गीता अध्याय ७-१२ हेतु अतिरिक्त टिप्पणियाँ व चार्ट

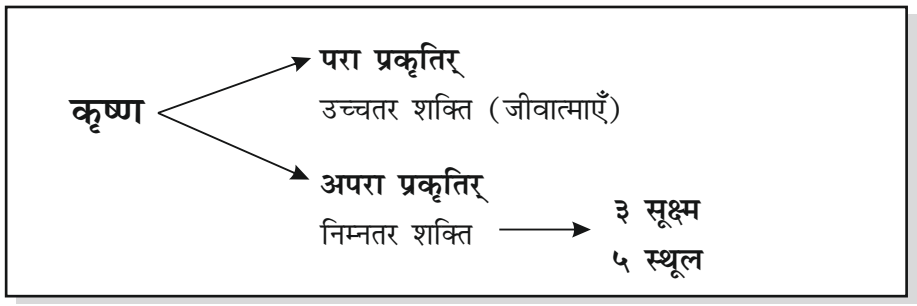

भगवद्गीता ७.१५-१६

चार दुष्कृतिन:

1. मूढ़ा : पशु कठोर →परिश्रमी भौतिकवादी
   उपमा - मूर्ख गधा →अपने स्वामी व संभोग जोड़ीदार की सेवा + लात खाना
   उपमा - सुअर - मिठाई में रूचि नहीं = परमसत्य के बारे में सुनने का समय नहीं
2. नर-अधमा → सभ्य - सामाजिक / राजनीतिक - ईश्वरविहिन
   (मानव निम्नतम) → (देखिए आत्म-हा)
   - श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती कहते हैं कि जो भक्ति ग्रहण करने के बाद उसे त्याग देते हैं
   विशेष उदाहरण - जगाई और मधाई / महाप्रभु श्रवण की संस्तुति करते हैं।
3. मायया - माया द्वारा, अपहृत - चुराया गया; ज्ञाना : - ज्ञान
   भ्रमित-विमोहित अनुमानकर्त्ता
   - अति-विद्वान ; महान विद्वजन; वैज्ञानिक; - ज्ञान
   - भगवद्गीता के अप्रामाणिक तात्पर्य
4. आसुरं भावं आश्रित: कसम खाए नास्तिक - ईर्ष्यालु
   अ) भगवान अवतार नहीं ले सकते
   ब) कृष्ण < ब्रह्म
   स) अवैध अवतार

चार सुकृतिन :- वे जो धार्मिक व पवित्र हैं / शास्त्रों का व नैतिक व सामाजिक नियमों का पालन करते हैं :

जिज्ञासु	:	जानने का इच्छुक	शौनक ऋषि व नैमिषारण्य के ऋषिगण
आर्त	:	कष्ट से व्यथित	गजेन्द्र
अर्थ-अर्थी	:	भौतिक लाभ का इच्छुक	ध्रुव महाराज
ज्ञानी	:	आत्म-साक्षात्कार प्राप्त	चतुष्कुमार व शुकदेव गोस्वामी

ये शुद्ध भक्त नहीं हैं क्योंकि उनकी कुछ न कुछ पाने की अभिलाषा हैं।

भगवद्गीता ७.२९-८.२

७.२९	ब्रह्म अध्यात्म कर्म	८.१
७.३०	अधिभूंत अधिदैवं	
	अधियज्ञः प्रयाण-काले	८.२

भगवद्गीता ७.२९-८.२

सत्य-युग	1,728,000		
त्रेता-युग	1,296,000		
द्वापर-युग	864,000		
कलि-युग	432,000		
कुल	4,320,000	=	दिव्य युग
		->	1000 (सहस्र युग)
		=	ब्रह्मा का एक दिन (कल्प)

ब्रह्मा का जीवन-काल = 3110 खरब 40 अरब वर्ष

भगवद्गीता ७.२९-८.२

योगं ऐश्वरं अचिंत्यः रहस्यमय ऐश्वर्य (विभूतियाँ) →

4-5 मया ततमिंद सर्वं

सृष्टि कृष्ण पर आश्रित है / किंतु वे पृथक हैं।

→ उपमा : राजा और विभाग

5-10 सब कुछ कृष्ण के आदेशानुसार / किंतु फिर भी स्वतंत्र है

→ उपमा : आकाश में वायु

उदासीन -वद आसीनं

कृष्ण सभी कारणों के उत्तरदायी/किंतु उदासीन/अनासक्त

→ उपमा : उच्च न्यायालय का न्यायधीश

9-10 मया अधि अक्षेन्

मेरी नियंत्रण नेत्र

अपने दृष्टिपात् से कृष्ण जड़ पदार्थ को सक्रिय करते हैं,

जीवों को उसमें आविष्ट करते हैं। किंतु स्वयं पृथक हैं

उपमा : पुष्प की गंध लेना किंतु स्पर्श न करना

भगवद्गीता १५-१९

1. एकत्वेन् - एकात्मवादी स्वयं को भगवान् के साथ एक रूप मान के पूजते हैं
   - सबसे निकृष्ट व सर्वाधिक संख्या में (11-12)
2. पृथकत्वेन् बहुधा - मनगंढ़त स्वय का निर्माण
   - देवी-देवताओं की आराधना सम्मिलित (20-25)
3. विश्वतो-मुख- विराट-रूप के उपासक(16-19)

भगवद्गीता ९.४

गीता-वेदों का सार
अध्याय 7-12 - गीता का सार
अध्याय 9-10 - अध्याय 7-12 का सार
श्लोक 9.34 - अध्याय 9-10 का सार

भगवद्गीता १२.८-१२

श्लोक ८ - मन दृढ़ता से ध्यान केंद्रित - .
- उत्कृष्ट कृष्ण भावनामृत

श्लोक ९ - साधना-भक्ति (अभ्यास) **प्रत्यक्ष**
- **अभ्याय-योगेन्-माम् इच्छाप्तु** (भक्ति)
(- कृष्ण को प्राप्त करने की इच्छा विकसित करना)

श्लोक १० - **मत्कर्म** (कृष्णकर्म) - मेरे लिए कर्म करो
- **कुर्वन्, सिद्धि अवाप्स्यसि** - सर्वोच्च सिद्ध स्तर तक आ जाओ

श्लोक १२ - ज्ञा.न ध्यान
- **ज्ञान योग-अष्टांग योग**
- ज्ञान /ध्यान **अप्रत्यक्ष**

श्लोक ११ - **कर्म-फल-त्याग**
- परिणामों का त्याग करो....(वर्णाश्रम-धर्म)

पूर्व-स्वाध्याय (आरंभिक स्वयं अध्ययन)

बंद पुस्तक परीक्षा हेतु प्रश्न

भगवद्गीता अध्याय - ७

1.भगवान् की आठ भौतिक शक्तियों को स्थूल में विभाजित कर के सूचीबद्ध कीजिए। (7.4)

2.परा प्रकृति व अपरा प्रकृति का हिंदी में अर्थ बताइए। (7.5)

3.इस भौतिक जगत में कृष्ण को देखने के छह तरीकों का विवेचन कीजिए। (7.8-11)

4.दुष्कृति और सुकृति शब्दों का हिंदी में अर्थ बताइए। (7.15-16)

5.संस्कृत व हिंदी में उन चार प्रकार के व्यक्तियों की सूची दीजिए जो कृष्ण के प्रति आत्मसमर्पण करते हैं तथा जो नहीं करते हैं। (7.15-16)

6.कृष्ण के प्रति समर्पण करने वालों में उनका सर्वाधिक प्रिय कौन होता है, और क्यों?

7.हृत-ज्ञाना: (7.20), अंतवत् तु फलम् (7.23) का हिंदी में अर्थ स्पष्ट कीजिए।

8.निराकारवादियों का कृष्ण कौन से संस्कृत शब्द में वर्णन करते हैं। (7.24)

9.इच्छा और द्वेष शब्द को परिभाषित करके उनके महत्व पर प्रकाश डालिए। (7.27)

भगवद्गीता अध्याय ८

11.माम् अनुस्मर युध्य च का हिंदी में अर्थ दीजिए। (8.14)

12.अनन्य चेता: व तस्याह सुलभ: का हिंदी में अर्थ दीजिए। (8.14)

13.दुखालयं शब्द का हिंदी में अर्थ बताइए। (8.15)

14.सत्य, त्रेता, द्वापर और कलियुग व एक कल्प की अवधि की सूची बनाइए। (8.17)

15.पृथ्वी के वर्षों में ब्रह्मा का जीवन-काल कितना है?

भगवद्गीता अध्याय ९

16.योगं ऐश्वरं (9.5), उदासीन वत् (9.9), मानुषीं तनुमाश्रितं (9.11) का हिंदी में अर्थ बताइए।

17.महात्माओं के चार लक्षण बताइए। (9.14)

18.संस्कृत या हिंदी में उन तीन प्रकार के व्यक्तियों की सूची दीजिए, जो कृष्ण की विभिन्न तरीकों से पूजा करते हैं। (9.15)

19.वहामि अहं वाक्यांश की हिंदी में अर्थ बताइए। (9.22)

20.यजन्ति अविधि-पूर्वकं का हिंदी में अर्थ बताइए। (9.23)

21.'भजन्ते मा अनन्य भाक् साधुर एव स मन्तव्य:' वाक्यांश का हिंदी में अर्थ बताइए। (9.30)

भगवद्गीता अध्याय १०

22.श्लोक 12 का कौन सा वाक्यांश यह सिद्ध करता है कि परम भगवान् वैयक्तिक आत्मा से भिन्न हैं?

23.ज्ञान-दीपेन (10.11) व एकांशेन स्थितो जगत् (10.42) वाक्यांशों को परिभाषित कीजिए।

24.अर्जुन कृष्ण को उनके ऐश्वर्यों का वर्णन करने के लिए क्यों कहता है?(10.17-18)

भगवद्गीता अध्याय ११

25.अर्जुन विराट्-रूप क्यों देखना चाहता था?(11.3)

26.विराट्-रूप भगवान् के अन्य रूपों से किस प्रकार भिन्न है?(11.5)

27.कालोऽस्मि लोकक्षयकृत तथा निमित्त मात्रं भव वाक्यांशों को परिभाषित कीजिए। (11.32-33)

भगवद्गीता अध्याय १२

28.तेषामहं समुद्धर्ता मृत्यु संसार सागरात वाक्यांश को परिभाषित कीजिए। (12.7)

29.संस्कृत या हिंदी में, वे पाँच गुण बताइए जो भक्त को कृष्ण का प्रिय बनाते है?(12.13-19)

भगवद्गीता अध्याय - ७-१२ से चुनी हुई उपमाएँ

७.७

हे धनंजय! मुझसे श्रेष्ठ कोई सत्य नहीं है। जिस प्रकार मोती धागे में गुँथे रहते हैं, उसी प्रकार सब कुछ, मुझ पर ही आश्रित है।

७.१२

राज्य के नियमानुसार कोई दंडित हो सकता है, किंतु नियम बनाने वाला राजा उस नियम के अधीन नहीं होता। इसी तरह, प्रकृति के सभी गुण-सतो, रजो व तमोगुण-भगवान् कृष्ण से उद्भूत हैं, किंतु कृष्ण प्रकृति के नियमों के अधीन नहीं है।

७.१४

यदि मनुष्य के हाथ-पैर बाँध दिए जाएँ, तो वह अपने को नहीं छुड़ा सकता-उसकी सहायता के लिए व्यक्ति चाहिए जो बँधा हुआ न हो। कोई ऐसा एक बँधा हुआ व्यक्ति दूसरे बँधे व्यक्ति की सहायता नहीं कर सकता है, अत: रक्षक को मुक्त होना चाहिए। अत: कृष्ण या उनके प्रामाणिक प्रतिनिधि गुरू ही बद्ध जीव को छुड़ा सकते हैं।

७.१५

जो शूकर विष्ठा खाता है, वह चीनी तथा घी से बनी मिठाइयों की परवाह नहीं करता। उसी प्रकार मूर्ख कर्मी इस नश्वर जगत् की इंद्रियों को सुख देने वाले समाचारों को बिना थके या उकताए निरंतर सुनता रहता है, किंतु संसार को गतिशील बनाने वाली शाश्वत् जीवित शक्ति (प्राण) के विषय में सुनने के लिए भी तनिक भी समय खर्च नहीं करना चाहता।

७.२३

ब्राह्मण परमेश्वर के सिर हैं, क्षत्रिय उनकी बाँहे हैं, वैश्य उनकी कटि (कमर) है और शूद्र उनके पाँव हैं और ये सभी विभिन्न कार्य-कलापों को संपन्न करते हैं।

७.२६

आकाश में बादल सूर्य, चंद्रमा तथा तारों को अल्प-काल के लिए ढँक सकता है, किंतु यह आवरण मात्र हमारी सीमित दृष्टि के लिए ही होता है। वे सभी वास्तव में ढँके नहीं हैं। इसी प्रकार माया परम् भगवान् को आच्छादित नहीं कर सकती।

८.८

एक कीट जो तितली बनना चाहता है, निरंतर उसके विषय में सोचता रहता है, अतएव इसी जीवनकाल में वह तितली में परिवर्तित हो जाता है। इसी प्रकार यदि हम निरंतर कृष्ण का चिंतन करते रहें, तो यह सुनिश्चित है कि हम जीवन के अंत में कृष्ण जैसा ही शरीर प्राप्त कर सकेंगे।

९.३

वृक्ष की जड़ को सींचने से उसकी शाखाएँ, टहनियाँ व पत्तियाँ, सभी तुष्ट हो जाते हैं और इसी प्रकार उदर को भोजन प्रदान करने से शरीर की सभी इंद्रियाँ तृप्त हो जाती हैं। ठीक इसी प्रकार, परम् भगवान् की दिव्य सेवा करने से समस्त देवी-देवता व अन्य सभी जीवगण स्वत: ही संतुष्ट हो जाते हैं।

९.४

एक राजा किसी सरकार का अध्यक्ष होता है और सरकार राजा की शक्ति का प्रकट स्वरूप होता है, विभिन्न सरकारी विभाग राजा की शक्ति के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं होते और प्रत्येक विभाग राजा की शक्ति पर ही आश्रित रहता है। तथापि, राजा से यह आशा नहीं की जा सकती कि वह प्रत्येक विभाग में स्वयं व्यक्तिगत रूप से उपस्थित रहे।

९.९

यहाँ पर उच्च न्यायालय के न्यायधीश का उदाहरण दिया जा सकता है, जो अपने आसन पर आसीन रहता है। उसके आदेश से अनेक तरह की बातें घटती रहती हैं–किसी को फाँसी दी जाती है, किसी को कारावास की सजा मिलती है, तो किसी को प्रचुर धनराशि प्रदान की जाती है–तो भी न्यायधीश निष्पक्ष व उदासीन रहता है।

९.१०

जब किसी के समक्ष एक सुगंधित पुष्प होता है तो उस व्यक्ति की सूँघने की शक्ति से सुगंध का स्पर्श होता है, तथापि सुगंध का अनुभव व पुष्प एक–दूसरे से पृथक् रहते हैं। ऐसा ही संबंध परम् भगवान् तथा भौतिक जगत् के बीच भी होता है।

९.२१

अतएव व्यक्ति बारम्बार उच्च स्वर्गीय ग्रहों तक ऊपर उठता है व पुनः पृथ्वी पर नीचे आता है, मानो वह किसी चक्र पर स्थित हो, जो कभी ऊपर जाता है और कभी नीचे आता है।

९.२३

अधिकारी तथा निर्देशक सरकार के प्रतिनिधि के रूप में ही अपना कार्य कर रहे हैं, अतः उन्हें किसी भी प्रकार की रिश्वत देना तो अवैध व गैरकानूनी है। कृष्ण अन्य देवी–देवताओं की अनावश्यक पूजा का समर्थन नहीं करते।

९.२९

जब एक हीरे को सोने की अँगूठी में जड़ दिया जाता है, तो वह अत्यंत सुंदर लगता है, इससे सोने की महिमा बढ़ती है और साथ ही हीरे की भी महिमा बढ़ती है। भगवान् तथा जीवात्मा निरंतर चमकते रहते हैं, किंतु जब कोई जीव भगवान् की सेवा में प्रवृत्त होता है, तो वह स्वर्ण के समान शोभायमान दिखाई देता है।

९.३०

चंद्रमा पर खरगोश की आकृति के समान जो धब्बे हैं, वे चंद्रमा द्वारा चाँदनी के प्रसार व वितरण में कोई बाधा नहीं डालते। इसी प्रकार, साधु सम्मत आचरण से किसी आकस्मिक दुर्घटनावश, एक भक्त का पतन उसे निंदनीय व घृणायोग्य नहीं बनाता।

१०.९

फलतः कृष्ण भावनाभावित जीवात्माएँ ऐसे दिव्य साहित्य के श्रवण में सतत दिव्य रूचि दिखाती हैं, ठीक वैसे ही जैसे एक नवयुवक व नवयुवती को एक–दूसरे के संग में आनंद अनुभव होता है।

११.५१

भगवद्गीता के मूल श्लोक सूर्य की भांति स्पष्ट हैं, मूर्ख टीकाकारों को उस पर प्रकाश डालने की कोई आवश्यकता नहीं है।

१२.५

हमें सड़कों के किनारे कुछ पत्रपेटिकाएँ मिल सकती हैं, जिनमें यदि हम अपने पत्र डाल दें, तो बिना किसी कठिनाई के स्वाभाविक रूप से वे अपने गंतव्य तक पहुँच जाएंगे। किंतु यदि कोई पुरानी पेटिका या उसकी कोई अनुकृति हमें कहीं दिखाई दे जाए, किंतु वह डाकघर द्वारा स्वीकृत व अधिकृत न हो, तो उससे यही कार्य नहीं हो सकेगा। इसी प्रकार भगवान् का एक प्रामाणिक व अधिकृत स्वरूप होता है, जिसे अर्च–विग्रह कहते हैं। यह अर्च–विग्रह भगवान् का एक अवतार होता है। भगवान् उस स्वरूप के माध्यम से सेवा ग्रहण करते है।

१२.७

कोई कितना ही कुशल तैराक क्यों न हो, और वह कितना ही कठिन संघर्ष क्यों न करे, किंतु समुद्र में गिर जाने पर वह स्वयं अपनी रक्षा नहीं कर सकता। किंतु यदि कोई आकर उसे जल से बाहर निकाल ले तो वह आसानी से बच जाता है। इसी प्रकार भगवान् भक्त को इस भौतिक अस्तित्व से उबार लेते हैं।

इकाई २ खुली पुस्तक मूल्यांकन प्रश्न

प्रश्न १

कृष्ण के कथनों ''मय्यासक्त मना:'' (7.1) और ''यततामपि सिद्धानां कश्चिन्माम् वेत्ति तत्त्वत:'' (7.3) का संदर्भ लेते हुए अध्याय 6 और 7 के मध्य संबंध की अपने शब्दों में व्याख्या कीजिए।

(समझ)

प्रश्न २

श्लोक 7.28 व इसके तात्पर्य के सदंर्भ में कृष्ण भक्ति के साधना-अभ्याय हेतु एक पूर्व योग्यता के रूप में पुण्य-कर्मणां की महत्ता पर अपने शब्दों में विवेचना व मूल्यांकन कीजिए।

(समझ/मूल्यांकन)

प्रश्न ३

भगवद्गीता 3.10-16, 7.20-23 व 9.20-25 से उचित श्लोकों, तात्पर्यों व उपमाओं के संदर्भ में देवी-देवताओं की उपासना की समुचित समझ की अपने शब्दों में व्याख्या कीजिए।

(प्रचार में उपयोग)

प्रश्न ४

भगवद्गीता अध्याय 8 में कृष्ण के कथनों व प्रभुपाद के तात्पर्यों के संदर्भ में अपने शब्दों में इसका वर्णन कीजिए कि किस प्रकार भक्तिमय सेवा द्वारा एक शुद्ध भक्त का भगवद्धाम को प्रस्थान सुनिश्चित रहता है।

(प्रचार में उपयोग)

प्रश्न ५

अपने शब्दों में वर्णन कीजिए कि किस प्रकार यह कथन ''एक शुद्ध भक्त कहीं भी रह सकता है और अपनी भक्तिमय सेवा से वृंदावन के वातावरण का निर्माण कर सकता है'' श्रील प्रभुपाद के भाव को प्रकट करता है(अपने उत्तर में भगवद् गीता श्लोक 8.14 व तात्पर्य का संदर्भ दीजिए।

(भाव और अभियान)

प्रश्न ६

भगवद्गीता 9.4-10 के संस्कृत शब्दों प्रभुपाद के तात्पर्यों और उपमाओं के संदर्भ में अपने शब्दों में कृष्ण के भौतिक जगत से संबंध का वर्णन कीजिए।

(समझ)

प्रश्न ७

श्लोक 9.26 व तात्पर्य के संदर्भ में अपने शब्दों में प्रकट कीजिए कि कैसे कृष्ण भक्ति का सरलतापूर्वक अभ्यास किया जा सकता है।

(प्रचार में उपयोग)

प्रश्न ८

भगवद्गीता अध्याय 9 के समुचित संस्कृत श्लोकों व प्रभुपाद के तात्पर्यों का संदर्भ देते हुए अपने शब्दों में चिन्हित कर शुद्ध भक्तिमय सेवा के सिद्धांतों का वर्णन कीजिए।

(प्रचार में उपयोग)

प्रश्न ९

चतु: श्लोकी-गीता के संस्कृत शब्दों व उक्तियों और प्रभुपाद के तात्पर्यों का विशेषरूप से संदर्भ लेकर अपने शब्दों में स्वयं के व्यक्तिगत प्रयोग के संगत सिद्धांतों को प्रस्तुत कीजिए।

(व्यक्तिगत उपयोग)

प्रश्न १०

भगवद्गीता 11.55 में दिए गए कृष्ण भावनामृत के सूत्र से अपने व्यक्तिगत उपयोग के लिए संगत बिंदुओं की चर्चा कीजिए। अपने उत्तर में श्लोक व श्रील प्रभुपाद के तात्पर्य से यथासंभव संगत संदर्भ कीजिए।

(व्यक्तिगत उपयोग)

इकाई 3 भगवद्गीता अध्याय 13 - 18

अध्याय १३ क्षेत्र-क्षेत्रज्ञ विभाग योग

क्षेत्र और क्षेत्रज्ञ	1-7
ज्ञान की पद्धति, ज्ञान	8-12
ज्ञान का पात्र, ज्ञेयं	19-19
प्रकृति, पुरुष व उनका समागम	20-26
ज्ञान चक्षुषा: ज्ञानमय दृष्टि	27-35

अध्याय १४ गुणत्रय विभाग योग

गुणों द्वारा बद्धीकरण	1-9
गुणों के अंतर्गत लक्षण, कर्म व मृत्यु	10-18
गुणों के पार जाना	19-27

अध्याय १५ पुरुषोत्तम योग

अश्वत्थ वृक्ष और अनासक्ति	1-5
देहांतरण	6-11
पालनकर्ता के रूप में कृष्ण	12-15
वेदांत सूत्र का सारांश	16-20

अध्याय १६ दैवासुर-संपद विभाग योग

दैवी और आसुरी गुण	1-6
आसुरी प्रकृति	7-18
आसुरी कार्यकलापों का फल	19-24

अध्याय १७ श्रद्धात्रय विभाग योग

गुणों के अंतर्गत श्रद्धा, पूजा व भोजन	1-10
गुणों के अंतर्गत यज्ञ, तप और दान	11-22
ऊँ तत् सत्	23-28

अध्याय १८ मोक्ष-सन्यास योग

कर्म-योग	1-12
ज्ञान-योग	13-18
प्रकृति के गुण	19-40
व्यक्ति के कर्म के माध्यम से कृष्ण की पूजा	41-48

भगवद्गीता अध्याय १३-१८ का संक्षिप्त अवलोकन

अध्याय १३

भगवद्गीता के पहले छह अध्यायों में कृष्ण यह वर्णन करते हैं कि कैसे कर्म-योग, अर्थात् ज्ञान के धरातल पर कार्य-कलाप, भक्ति के मार्ग पर ले जाता है। अगले छह अध्यायों में कृष्ण सीधे स्वयं के विषय में और भक्तिमय-सेवा की महिमा का वर्णन करते हैं। अगले छह अध्यायों में कृष्ण चर्चा करते हैं कि कैसे ज्ञान भक्ति की ओर ले जाता है। तेरहवें अध्याय में आरंभ करके, यह वर्णन किया गया है कि कैसे जीवात्मा भौतिक प्रकृति के संपर्क में आती है और कैसे सकाम कर्म, ज्ञान के अनुशीलन और भक्तिमय सेवा की विविध पद्धतियों द्वारा भगवान् जीवात्मा का उद्धार करते हैं।

क्षेत्र और क्षेत्रज्ञ (१-७)

अध्याय 12 के श्लोक 7 में कृष्ण अपने भक्तों के उद्धार का वचन देते हैं। उसी के फलस्वरूप, अब वह इस भौतिक संसार में भक्तों के उद्भव के लिए आवश्यक ज्ञान प्रदान कर रहे हैं। अर्जुन कृष्ण से छह विषयों के वर्णन का निवेदन करते हैं, प्रकृति, पुरुष, क्षेत्र, क्षेत्रज्ञ, ज्ञान और ज्ञेय। कृष्ण कार्य के क्षेत्र तथा क्षेत्रज्ञ के बारे में ज्ञान का वर्णन करते हैं।

ज्ञान की पद्धति (८-१२)

क्षेत्र और क्षेत्रज्ञ के विषय में वर्णन करने के पश्चात् अब कृष्ण विनम्रता से आरंभ हो कर और परम् सत्य के साक्षात्कार में परिणित होने वाली ज्ञान की पद्धति की व्याख्या करते हैं। (श्लोक 8-12)

ज्ञान की विषय-वस्तु (१३-१९)

श्लोक 13-19 में ज्ञान की विषय वस्तु (ज्ञेयं), अथवा आत्मा और परमात्मा की चर्चा की गई है। पूर्व में, कृष्ण आत्मा व परमात्मा का क्षेत्रज्ञ के रूप के रूप में वर्णन कर चुके हैं। शरीर, आत्मा व परमात्मा के मध्य का अंतर समझ कर और ज्ञान की पद्धति का पालन करके आत्मा दुविधाओं के परे जा सकती है, इस प्रकार कृष्ण के प्रति अपने शाश्वत सेवकत्व का साक्षात्कार कर आत्मा परमधाम को प्राप्त कर सकती है।

प्रकृति, पुरुष और उनका समागम (२०-२६)

आत्मा और परमात्मा का ज्ञेय के रूप में वर्णन करने के बाद, अब कृष्ण आत्मा और परमात्मा का उनके भौतिक प्रकृति से संबंध के संदर्भ में, पुरुष के रूप में वर्णन करते हैं। जो व्यक्ति प्रकृति, पुरुष और उनके परस्पर संबंध क्रिया आदि को समझ लेता है, वह इस संसार में जन्म के चक्र से मुक्ति प्राप्त कर लेता है। परमात्मा को समझने की अन्य विधियाँ ज्ञान व अष्टांग येाग हैं।

ज्ञान-चक्षुषा (२७-३५)

जो व्यक्ति शरीर, उसके स्वामी और परमात्मा के मध्य के अंतर को स्पष्ट देख सकता है और जो मुक्ति की पद्धति को पहचानता है, वह परम् उद्देश्य को प्राप्त कर सकता है।

अध्याय १४

अध्याय 13 में वर्णन कि है बद्ध जीवात्मा भौतिक प्रकृति से भिन्न हो कर भी अपने कार्य-कलापों के क्षेत्र में फँस कर, उसके अधीनस्थ उलझा रहता है। अध्याय 14 विस्तार से वर्णन करता है कि कैसे जीवात्मा सीमित है और भौतिक प्रकृति की शक्तिशाली बेड़ियों, तीन गुणों-सतो, तमो व रजो द्वारा नियंत्रित होता है। इस अध्याय के अंत में, कृष्ण हमें इन गुणों से स्वतंत्रता कैसे पानी है, के विषय में सूचित करते है।

गुणों द्वारा बद्धता (१-९)

अपने द्वारा अब आगे बताए जाने वाले ज्ञान के माहात्म्य की प्रशंसा करने के बाद, कृष्ण भौतिक प्रकृति, बद्ध जीवात्मा और स्वयं के मध्य के संबंध का वर्णन करते हैं। वह जीवों को भौतिक प्रकृति में गर्भस्थ करते हैं। शाश्वत जीवात्मा तीन गुणों से बद्ध होने के माध्यम से भौतिक प्रकृति से संबंध स्थापित करती है। सतोगुण व्यक्ति को प्रसन्नता से बाँधता है, रजो गुण सकाम कार्य-कलाप और तमोगुण पागलपन से बाँधता है।

गुणों के अंतर्गत लक्षण, कर्म व मृत्यु (१०-१८)

कृष्ण गुणों के लक्षण व प्राकट्य का स्वरूप (श्लोक 11-13), गुणों के अंतर्गत मृत्यु (श्लोक 14-15) और गुणों में कर्म के परिणाम (श्लोक 16-18) का वर्णन करते हैं।

गुणों के परे जाना

यह जानकर कि ''इस संसार में सब कुछ गुणों के अंतर्गत होता है'' और यह समझकर कि ''कृष्ण की गतिविधियाँ गुणों के परे व दिव्य है'' व्यक्ति गुणों के परे चला जाता है। वह जो अविचलित रह कर भक्तिमय सेवा में रत रहता है, ब्रह्म के स्तर को प्राप्त कर लेता है, जिसका स्रोत कृष्ण हैं। श्लोक 22, दिव्य धरातल पर स्थित व्यक्ति के लक्षणों से संबंधित उसके दूसरे प्रश्न का उत्तर देता है।

अध्याय १५

अध्याय 14 में प्रकृति के गुणों, वे शक्तियाँ जो एक आत्मा का उसके कार्य-क्षेत्र में नियमन व नियंत्रण करती है, का वर्णन किया गया है। अब कृष्ण एक अश्वत्थ (बरगद) वृक्ष की काल्पनिक कथा का उदाहरण दे कर इस समस्त भौतिक जगत् का वृक्ष की ऊँची व निचली शाखाओं पर स्थित विविध कार्य-क्षेत्रों सहित वर्णन करते हैं।

भौतिक जगत् से अनासक्त होना (१-५)

यद्यपि जीवात्माएँ कृष्ण का सूक्ष्म अंश होती है, तथापि अभी वे भौतिक जगत् के अश्वत्थ वृक्ष में उलझ कर अस्तित्व के लिए संघर्ष कर रही हैं। व्यक्ति को कृष्ण के प्रति आत्मसमर्पण कर के स्वयं को आध्यात्मिक जगत् के इस विकृत प्रतिबिंब से अनासक्त कर लेना चाहिए और इस प्रकार आध्यात्मिक जगत् की ओर बढ़ जाना चाहिए। इस अध्याय के प्रथम पाँच श्लोकों में अश्वत्थ वृक्ष का विश्लेषण किया गया है। तत्पश्चात् श्लोक 6-20 में, कृष्ण पुरुषोत्तम-योग का वर्णन करते हैं।

देहांतरण (६-११)

यद्यपि सभी जीवात्माएँ कृष्ण का शाश्वत अंश है, फिर भी वे एक शरीर से दूसरे शरीर में सुख की खोज में देहांतरण कर रही हैं। आत्म-साक्षात्कार प्राप्त योगी इसे स्पष्ट रूप से देखते है किंतु अंधे भौतिकवादी इसे नहीं देख पाते।

पालनकर्ता के रूप में कृष्ण (१२-१५)

वैश्विक तथा वैयक्तिक स्तर पर हमारे पालनकर्ता के रूप में कृष्ण की ऐश्वर्यमयी स्थिति - और वेदांत के संकलनकर्ता व समस्त वेदों के ज्ञाता के रूप में उनकी स्थिति - के विषय में जानकारी से हमें उनकी ओर आकर्षित होना चाहिए।

वेदांत-सूत्र का सारांश (१६-२०)

यह निष्कर्ष बताने के पश्चात् कि भगवान् ही वेदों के लक्ष्य व वेदांत के संकलन कर्ता लेखक हैं, वे वेदांत का सारांश बताते हैं, जिससे निष्कर्षत: उनकी परम स्थिति की स्थापना हो जाती है। श्लोक 15 के तात्पर्य में, श्रील प्रभुपाद ने संबंध, अभिधेय व प्रयोजन के महत्व का संकेत दिया था। श्लोक 16-18 कृष्ण से हमारे संबंध का ज्ञान (संबंध-ज्ञान) देते हैं और कभी-कभार त्रिश्लोकी गीता के रूप में भी जाने जाते हैं। कृष्ण 'वेदों के ज्ञाता' और 'वेदांत के संकलनकर्ता लेखक' हैं। ये तीन श्लोक वेदों के सार वेदांत का सारांश बताकर आत्मा को भौतिक प्रकृति के परे जाने से सहायता करते हैं। श्लोक 19 अभिधेय ज्ञान, प्राप्ति की विधि, और अंतिम श्लोक, श्लोक 20 प्रयोजन अर्थात् लक्ष्य का वर्णन करता है। भौतिक अस्तित्व की समस्याएँ हृदय की दुर्बलताओं के कारण होती है, भौतिक प्रकृति पर स्वामित्व व विजय प्राप्ति की कामना, जिसके फलस्वरूप आसक्ति और प्रभुत्व की भावना उत्पन्न होती है। इस अध्याय के पहले पाँच श्लोक स्वयं को हृदय की इन दुर्बलताओं से मुक्त करने की पद्धति का वर्णन करते हैं और छठवें श्लोक से अंत तक पुरुषोतम-योग की चर्चा की गई है।

अध्याय १६

अध्याय 15 में भौतिक जगत के अश्वत्थ का वर्णन है। भौतिक प्रकृति के गुण इस वृक्ष की ऊपरी, शुभ व दिव्य शाखाओं का और निचली आसुरी शाखाओं, दोनों का ही पोषण करते हैं। अध्याय 16 में, कृष्ण दिव्य गुणों का वर्णन करते हैं जो व्यक्ति को इस वृक्ष में उन्नत होने और इस प्रकार सर्वोच्च मुक्ति प्राप्त करने में अग्रसर करते हैं।

दैवी और आसुरी गुण (१-६)

कृष्ण आसुरी गुणों का विस्तार से वर्णन करते हैं और वह मानसिकता जो व्यक्ति को वृक्ष के निचले स्तरों और अंतत: नरक को ले जाती है, उस की भी व्याख्या करते हैं। वे गुणों के लाभ व हानियों का भी वर्णन करते हैं।

आसुरी स्वभाव (७-१८)

आसुरी गुणों का संक्षिप्त वर्णन करने के पश्चात्, आगे कृष्ण आसुरी प्रवृत्तियों वाले व्यक्ति के क्रिया-कलापों, मानसिकता और गुणों का वर्णन करते हैं।

आसुरी कर्मों के परिणाम और उन्नति या अधोगति के चयन की सुविधा (१९-२४)

आसुरी कर्मों का परिणाम कृष्ण द्वारा निम्नस्तरीय योनियों या अन्य नारकीय जीवनों में डाल दिया जाना होता है। चूँकि काम, क्रोध और लोभ आसुरी जीवन का आरंभ होते हैं, सभी समझदार व्यक्तियों को उन्हें त्याग देना चाहिए और शास्त्रों का श्रद्धापूर्वक पालन करते हुए अपने कर्त्तव्यों को समझना चाहिए। दैवी व आसुरी के मध्य सर्वप्रमुख भेद यही है कि दैवी शास्त्रों का पालन करते हैं जबकि आसुरी ऐसा नहीं करते।

अध्याय १७

अध्याय 16 में कृष्ण ने स्थापित किया था कि शास्त्रों के श्रद्धालु पालनकर्ता दैवी (दिव्य) हैं और अश्रद्धालु (श्रद्धाविहीन) आसुरी है। किंतु ऐसा व्यक्ति कौन से वर्ग में डाला जाएगा जो शास्त्रों के अतिरिक्त अन्य किसी प्रणाली का श्रद्धापूर्वक पालन करता है।

विविध गुणों के अंतर्गत श्रद्धा पूजा व भोजन (१-१०)

कृष्ण यह वर्णन करते हुए उत्तर देते हैं कि कैसे भौतिक प्रकृति के गुण एक व्यक्ति की श्रद्धा, पूजा व भोजन की आदतों का निर्धारण करते हैं।

गुणों के अंतर्गत यज्ञ, तप और दान (११-२२)

भगवान् कृष्ण प्रकृति के गुणों के प्रभावों, अंतर्गत यज्ञ, तप और दान की व्याख्या करते हैं।

ऊँ तत् सत् का जप कार्यों का शुद्धिकरण करता है (२३-२८)

सभी कार्य गुणों द्वारा दूषित हो जाते हैं और उन दोषों का निवारण प्रकृति के गुणों के अंतर्गत रहकर भी, कृष्ण की सेवा व ऊँ तत् सत् के जप द्वारा किया जा सकता है। वास्तव में हमारे सभी कार्यों का लक्ष्य परम् भगवान् की प्रसन्नता ही होना चाहिए। जब यज्ञ, व्रत और तप का पालन परम् भगवान् में श्रद्धा के बिना किया जाता है तो वे निरर्थक और व्यर्थ होते हैं, इस जीवन में और अगले जन्म में भी।

अध्याय १८

समस्त भगवद्गीता सत्रह अध्यायों में समाप्त हो जाती है और कृष्ण के प्रति आत्मसमर्पण के लक्ष्य पर बल देने के लिए इस अंतिम अध्याय में पूर्व के सभी अध्यायों का सार बताया गया है। यहाँ कृष्ण निष्कर्षत: कहते हैं, जैसा कि वह संपूर्ण भगवद्गीता में कहते आए हैं, कि व्यक्ति को भक्तिमय सेवा की साधना करनी चाहिए।

कर्मयोग : भक्तिमय कर्म की कर्म सन्यास से श्रेष्ठता (१-१२)

कृष्ण अपने पहले बताए गए सारे उपदेश के सारांश का आरंभ अर्जुन को दिए गए सुझाव को दोहरा कर करते हैं कि अर्जुन को कर्म-फल को त्यागना चाहिए न कि स्वयं कर्म को। श्लोक 1-12 भगवद्गीता के अध्याय 1-6 तक का सारांश है, जो कर्म-योग का वर्णन करते हैं।

ज्ञान-योग (१३-१८)

कर्म पर अपनी शिक्षाओं का सारांश बता कर कृष्ण ज्ञान (जो कि अंतिम छह अध्यायों की विषय-वस्तु है) के दृष्टिकोण से वर्णन करते हैं कि कैसे कार्य करते रहना किंतु सभी फलों से मुक्त रहना संभव है। कृष्ण वेदांत से उद्धरण देते हैं और पाँच विशिष्ट तथ्यों से बने कार्यों का विश्लेषण करते हैं। (श्लोक 13-18)

प्रकृति के विस्तार से गुण (१९-४०)

तदुपरांत वे विस्तार से वर्णन करते है कि कैसे पाँच विशिष्ट तत्वों के अनुसार व्यक्ति के कर्म भौतिक प्रकृति के तीन गुणों से निर्देशित होते हैं। गुणों के अंतर्गत ज्ञान का श्लोक 19-22 में वर्णन हुआ है, जबकि गुणों के अंतर्गत व्यक्ति के कार्यों का श्लोक 23-25 में वर्णन किया गया है। श्लोक 26-28 व्यक्ति की कार्यों में संलग्नता का वर्णन करते हैं श्लोक 29-32 व्यक्ति की समझ की व्याख्या करते हैं, श्लोक 33-35 व्यक्ति के निश्चय व इच्छा शक्ति का वर्णन करते हैं और श्लोक 36-39 गुणों के अंतर्गत व्यक्ति के सुख का वर्णन करते हैं।

अपने कर्म के माध्यम से कृष्ण की पूजा (४१-४८)

यद्यपि सभी कार्य गुणों द्वारा नियंत्रित होते हैं, जैसा कि पिछले श्लोकों में वर्णन किया गया है, तथापि व्यक्ति ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य या शूद्र के रूप में अपने कर्त्तव्य का पालन करते हुए अपने उस कर्म के माध्यम से कृष्ण की पूजा करके कर्म-फलों से मुक्ति प्राप्त कर सकता है।

ज्ञान से शुद्ध भक्तिमय सेवा तक (४९-५५)

तत्पश्चात् भगवान कृष्ण उस स्तर का वर्णन करते हैं, जिसमें व्यक्ति ज्ञान-योग के माध्यम से अपने विहित-कर्म का परित्याग कर सकता है। ज्ञान योग में व्यक्ति बुद्धि के प्रयोग द्वारा अपना शुद्धिकरण करता है। वह मुक्ति की ओर अग्रसर होता है जब व्यक्ति शुद्ध भक्तिमय सेवा में संलग्न होने के योग्य हो जाता है।

कृष्ण के प्रति आत्मसमर्पण (शरणागति) (५६-६६)

स्वयं को समझने के लिए भक्तिमय सेवा के महत्व का वर्णन करने के पश्चात् कृष्ण यह समझाते हैं कि किस प्रकार उन पर निर्भर रह कर व उनके संरक्षण में कार्य करके व्यक्ति सभी बाधाओं पर विजय प्राप्त कर सकता है। फिर वे परमात्मा विषयक और अधिक गुह्य ज्ञान का वर्णन करते हैं और अन्ततः उनका भक्त बन कर उनके शरणागत हो जाने सम्बन्धी परम गुह्य ज्ञान का वर्णन करते हैं।

अर्जुन युद्ध करने के लिए सहमत हो जाता है और संजय द्वारा सुनिश्चित विजय का आश्वासन (६७-७८)

कृष्ण के निर्देशों को सुनकर, अर्जुन दृढ़ निश्चयी हो कर युद्ध के लिए तैयार हो जाता है। इस वार्त्तालाप को धृतराष्ट्र को सुनाने के पश्चात् संजय भाव विभोर हो कर कृष्ण के विराट-रूप का स्मरण करते हैं और परम धनुर्धर अर्जुन के लिए विजय की भविष्यवाणी करते हैं क्योंकि वह योगेश्वर कृष्ण की शरणागति में है। यह भगवद्गीता के आरंभ में धृतराष्ट्र द्वारा किए गए कूटप्रश्न का उनका उत्तर है।

भगवद्गीता अध्याय १३-१८ के लिए अतिरिक्त टिप्पणियाँ और चार्ट

भगवद्गीता १५.९

अतएव जीवात्मा एक और स्थूल शरीर ग्रहण करके मन के चारों और केंद्रित एक निश्चित प्रकार के कान, आँख, जिह्वा, नासिका व स्पर्श की संवेदना को प्राप्त करती है।

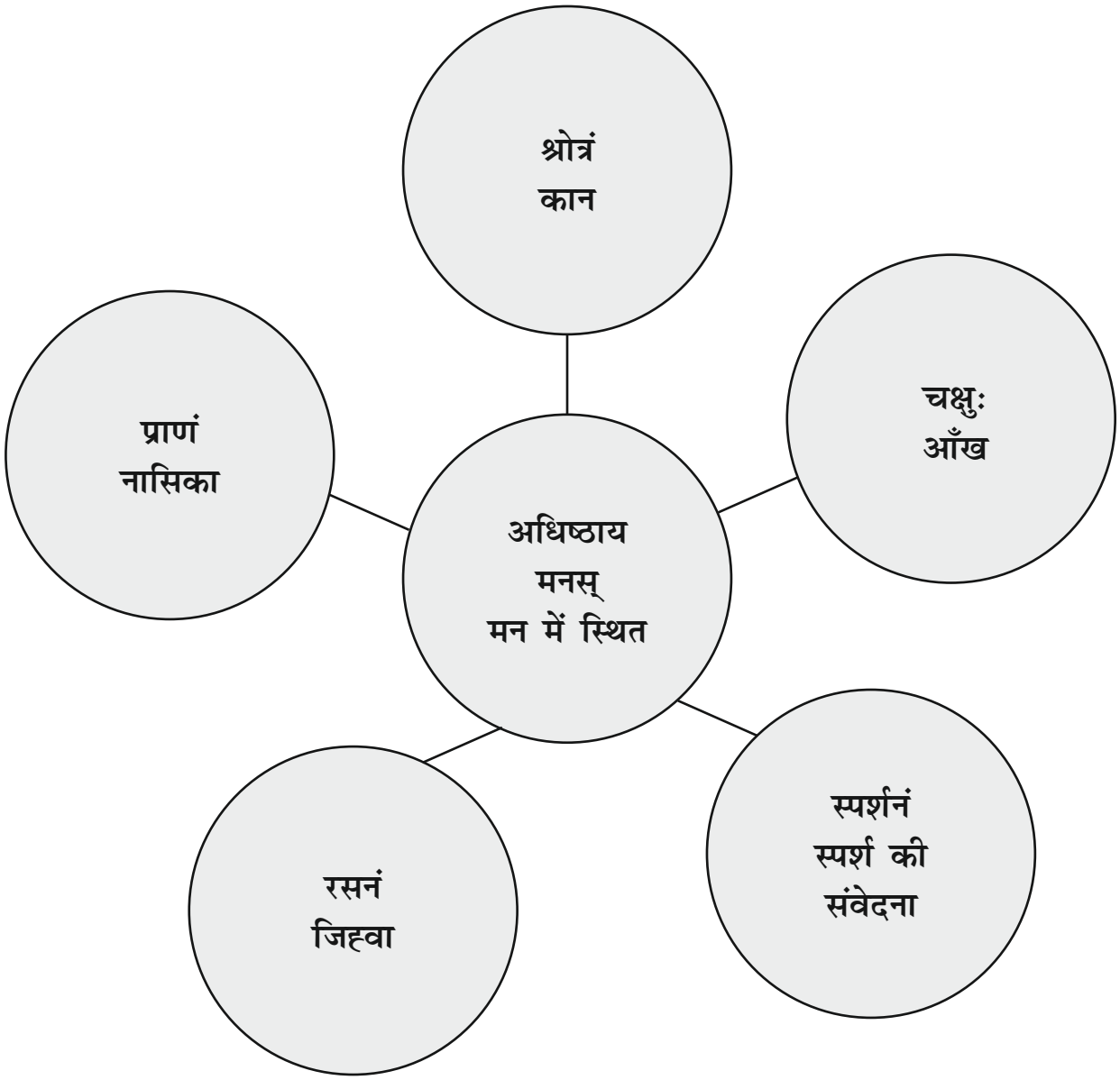

अध्याय १४ तीन गुणों के कार्य

गुण	बाँधने की शक्ति	विशेषताएँ व विस्तार	मृत्यु के बाद गंतव्य स्थान	कर्मफल
सत्त्वगुण	भाव : 1. सुख 2. संतुष्टि 3. ज्ञान 4. श्रेष्ठता	1. शरीर के द्वारों को ज्ञान से प्रकाशित करता है। 2. पाप-कर्मों से मुक्त करता है।	महान ऋषियों के पवित्र, उच्चतर लोकों की प्राप्ति	1 शुद्ध 2. ज्ञान (चीजों को यथावत् देखना) 3. उच्चतर लोकों की प्राप्ति
रजोगुण	सकाम कर्मों की आसक्ति	1. तीव्र, असीमित इच्छाएँ व कामनाएँ 2. महान् आसक्ति 3. सकाम कर्म	पृथ्वी लोक की प्राप्ति	1. दुख 2. लोभ 3. पृथ्वी लोक
तमोगुण	1. पागलपन 2. आलस्य 3. निद्रा	1. भ्रम/मोह 2. अंधकार 3. पागलपन 4. प्रमाद	निम्न योनियों में जन्म	1. मूर्खता 2. पागलपन 3. मोह 4. नारकीय लोकों में वास

अध्याय १७ गुणों के अंतर्गत कार्य

	सत्त्वगुण	रजोगुण	तमोगुण
उपासना	देवी देवता	असुर	भूत–प्रेत
भोजन	1. जीवन की अवधि बढ़ाता है 2. शुद्धिकरण करता है 3. प्रदान करता है स्वास्थ्य सुख संतुष्टि शक्ति 4. रसीला 5. गरिष्ठ 6. पूर्ण व संतुलित 7. हृदय को आनंददायक	1. अत्यधिक तीखा 2. अत्यधिक खट्टा 3. नमकीन 4. गर्मी वाला 5. तीक्ष्ण 6. शुष्क 7. ज्वलन शील अर्थात् जलन पैदा करने वाला 8. दुख, शोक व रोग की उत्पत्ति का कारक	1. खाने के तीन घंटे पूर्व पकाया गया 2. स्वादहीन 3. सड़ा एवं गला हुआ 4. वियोजित 5. अस्पृश्य व जूठे अवयवों से भरा
यज्ञ	1. श्रद्धा से कृत 2. शास्त्रों के अनुसार 3. भौतिक लाभ की इच्छा से रहित	1. भौतिक लाभ की इच्छा से प्रेरित 2. गर्ववश किया गया	1. शास्त्रों की अवहेलना 2. प्रसाद का वितरण नहीं 3. वैदिक मंत्रोच्चार के बिना 4. पुरोहितों को दक्षिणा के बिना 5. श्रद्धा के बिना
तपस्या	1. दिव्य श्रद्धा से संपन्न 2. भौतिक लाभ की इच्छा से रहित 3. परमेश्वर की संतुष्टि के लिए	1. गर्ववश किया गया 2. सम्मान, सत्कार व पूजा के लाभ हेतु 3. न तो स्थायी, न ही शाश्वत	1. मूर्खतापूर्वक किया गया 2. आत्म–उत्पीड़न के साथ 3. दूसरों के विनाश या हानि के लिए
दान	1. कर्त्तव्य समझकर 2. किसी प्रत्युपकार की आशा के बिना 3. समुचित काल में 4. समुचित स्थान पर 5. योग्य व्यक्ति को दिया गया	1. प्रत्युपकार की भावना से 2. कर्मफल की इच्छा से 3. अनिच्छापूर्वक	1. अपवित्र स्थान में 2. अनुचित समय पर 3. अयोग्य व्यक्ति को 4. समुचित ध्यान के बिना 5. समुचित आदर के बिना

	सत्त्वगुण	रजोगुण	तमोगुण
ज्ञान	1. सभी जीवात्माओं में एक ही अविभक्त आध्यात्मिक प्रकृति को देखना 2. अनंत रूपों में विभक्त होने के बावजूद	1. विभिन्न शरीरों में भिन्न भिन्न जीवात्माओं को देखना	1. अपने कार्य को ही सर्वस्व समझकर आसक्त 2. सत्य का ज्ञान नहीं 3. अत्यल्प ज्ञान
कर्म	1. नियमित 2. आसक्तिरहित 3. राग या द्वेष रहित 4. कर्म फल की कामना से रहित	1. अत्यधिक प्रयासपूर्वक 2. अपनी इंद्रियों की संतुष्टि के लिए कृत 3. मिथ्या अहंकार की भावना से	1. मोहवश कृत 2. शास्त्रीय आदेशों की अवहेलना कर के 3. भावी बंधन की चिंता किए बिना 4. अथवा हिंसा के लिए या अन्यों को कष्ट पहचाने हेतु
कर्त्ता	1. भौतिक गुणों के संसर्ग के बिना 2. अहंकाररहित 3. महान् संकल्प व उत्साहपूर्वक 4. सफलता या विफलता में अविचलित	1. कर्मफलों के प्रति आसक्त 2. कर्मफलों को भोगने की इच्छा से युक्त 3. लोभी, ईर्ष्यालु व अपवित्र	1. शास्त्रें के विरुद्ध कर्म 2. भौतिकवादी, हठी, धोखेबाज 3. अन्यों का अपमान करने में कुशल 4. आलसी, सदैव खिन्न व कार्य को टालने वाला
समझ	1. क्या करने योग्य है और क्या करने योग्य नहीं है, यह जानने वाला 2. किस से भयभीत होना चाहिए व किस से नहीं, यह जानने वाला 3. क्या बंधनकारी है व क्या मुक्तिदायक यह जानने वाला	1. अधर्म व धर्म में भेद नहीं कर सकता 2. अथवा करने योग्य व न करने योग्य कार्य में भेद नहीं कर सकता	1. अधर्म को धर्म समझना आदि 2. अंधकार के वशीभूत 3. सदैव गलत दिशा में प्रयास करने वाला
निश्चय	1. अटूट 2. अचलता से कायम रहने वाला 3. मन, प्राण तथा इंद्रियों को नियंत्रित करता है	1. धर्म, अर्थ व काम की प्राप्ति स्वरूप फल के लिए व्रत करता है	1. स्वप्न, भय व शोकपूर्ण विषाद के परे नहीं जा सकता
सुख	1. आरंभ में विष जैसा किंतु अंत में अमृत तुल्य 2. आत्म-साक्षात्कार में जागृत हो जाता है।	1. इंद्रियों तथा उनके विषयों के संसर्ग से 2. आरंभ में अमृततुल्य, अंत में विषतुल्य	1. आत्म-साक्षात्कार के प्रति अंधा 2. आरंभ से अंत तक भ्रम में 3. निद्रा, आलस्य व मोह से

व्यक्ति को कृष्ण का प्रिय बनाने वाले गुण

भगवद्गीता अध्याय 12, श्लोक 13-19

ईर्ष्याविहीन	एक भक्त अपने शत्रु का भी शत्रु नहीं होता
सभी जीवों का दयालु मित्र	अपने शत्रुओं का भी
स्वयं को एक स्वामी नहीं समझता	
मिथ्या अहंकार से मुक्त	स्वयं की शरीर के साथ पहचान नहीं करता
सुख एवं दुख से समभाव	
सहनशील/सहिष्णु	
सदा संतुष्ट	परम् भगवान् की कृपा से जो भी प्राप्त हो जाए, उस से अधिक कठिन प्रयास द्वारा कुछ प्राप्त करने को यत्नशील नहीं
आत्म संयमी	गुरू द्वारा प्राप्त निर्देशों में एकनिष्ठ
निश्चयपूर्व भक्तिमय सेवा में संलग्न	चूँकि उसकी इंद्रियाँ नियंत्रित हैं अत: झूठे तर्कों द्वारा विचलित नहीं होता
मन व बुद्धि कृष्ण में एकनिष्ठ	पूर्णत: अवगत व जागरूक कि कृष्ण शाश्वत भगवान् हैं, अत: कोई उसे उद्विग्न नहीं कर सकता
वह जिसके द्वारा कोई भी कठिनाई में नहीं डाला जाता	ऐसे कार्य नहीं करता जिससे अन्यों को संताप हो
किसी के द्वारा विचलित नहीं	भगवान् की कृपा से वह ऐसा अभ्यस्त होता है कि वह किसी भी बाहरी समस्या से विचलित नहीं होता
सुख एवं दुख, भय व चिंता से समभाव	इन सभी चिंताओं से पूर्णत: परे
गतिविधियों के साधारण क्रम पर निर्भर नहीं	धन के संचयन के प्रति प्रति उदासीन
शुद्ध	दिन में कम से कम से कम दो बार स्नान करता है आंतरिक व बाह्यरूप से स्वच्छीकरण प्रात: शीघ्र उठता है।
निपुण	जीवन के सभी कार्यों का सार जानता है आधिकारिक व प्रामाणिक शास्त्रों में श्रद्धावान
चिंताओं से मुक्त	किसी का पक्ष नहीं लेता अर्थात् पूर्णत: निष्पक्ष
सभी पीड़ाओं से मुक्त	सभी उपाधियों से मुक्त
किसी फल हेतु प्रयासशील नहीं	ऐसा कोई प्रयास नहीं करता जो भक्तिमय सेवा के सिद्धांतो के विरुद्ध हों
न तो आनंदित न ही दुखी होता है	भौतिक लाभ या हानि से सुखी या दुखी नहीं होता
न तो शोक न ही कामना करता है	किसी प्रिय वस्तु को खोने पर शोक नहीं करता, अपनी कामनाओं के पूर्ण न होने पर व्यथित नहीं होता
शुभ व अशुभ दोनों का परित्याग	वह इन सभी दुविधाओं से परे है
मित्रों व शत्रुओं के प्रति समभाव	
सम्मान व अपमान, ग्रीष्म व शीत, सुख व दुख, ख्याति व अपयश में समभाव	इन दुविधाओं से परे है
दूषित संग से सदैव मुक्त	
शांत	शांत का अर्थ व्यक्ति को अनर्गल नहीं बोलना चाहिए केवल सार की बात करनी चाहिए परम भगवान के लिए बोलते है
किसी भी स्थिति में संतुष्ट	सभी स्थितियों में प्रसन्न, चाहे सुविधाओं हो या नहीं
किसी निवास की चिंता नहीं करता	कभी एक वृक्ष के नीचे तो कभी एक महल जैस भवन में रह सकता है
ज्ञान में सुदृढ़	
भक्तिमय सेवा में संलग्न	इसीलिए भक्त में स्वत: सभी अच्छे गुण उत्पन्न हो जाते हैं

ज्ञान के बीस तत्व
भगवद्गीता अध्याय १३ श्लोक ८-१२

विनम्रता	अन्यों द्वारा सम्मान पाने की तुष्टि के लिए व्यग्र न होना
दम्भहीनता	विनम्रता देखें
अहिंसा	अन्यों को विपत्ति में न डालना, जब तक व्यक्ति लोगों को आध्यात्मिक ज्ञान में ऊपर नहीं उठाता, तब तक वह हिंसा करता रहता होता है, व्यक्ति को लोगों में वास्तविक ज्ञान वितरित करने का भरसक प्रसास करना चाहिए।
सहिष्णुता	अन्यों द्वारा किए गए अपमान व तिरस्कार को सहने का अभ्यस्त होना
सरलता	बिना किसी कूटनीति के सरलतापूर्वक अपने शत्रु तक के समक्ष सत्य का उद्घाटन कर सकना
एक गुरू स्वीकार करना	यह अनिवार्य है
पवित्रता (शौच)	स्नान (बाह्य) और जप (आंतरिक)
दृढ़ता (स्थैर्य)	आध्यात्मिक जीवन में प्रगति करने के लिए दृढ़ संकल्पित होना
आत्मसंयम	आध्यात्मिक उन्नति के पथ पर जो भी बाधक हो, उसे स्वीकार न करना
विषय वस्तुओं से वैराग्य	अनावश्यक माँगों की पूर्ति न करना, भक्तिमय सेवा हेतु शरीर को स्वस्थ व सक्षम रखने मात्र के लिए इंद्रिय तृप्ति करना
मिथ्या अहंकार की अनुपस्थिति	'मैं यह शरीर, मन आदि हूँ' को अस्वीकार कर देना, 'मैं कृष्ण का एक सेवक हूँ' को स्वीकार करना
जन्म, मृत्यु, जरा, व्याधि को दु:खदायक दोषों के रूप में देखना	उचित स्रोत से नियमित रूप से इस विषय पर श्रवण करना
वैराग्य (असक्ति)	कृष्ण के लिए सर्वस्व न्यौछावर करने को तत्पर रहना
पत्नी, संतानों आदि से बंधनकारी मोह न करना	स्नेह स्वाभाविक है, किंतु यदि संबंध भक्ति के अनुकूल न हो तो उसका परित्याग कर देना
समचित्तत्व	अटूट भक्तिमय सेवा के अभ्यास द्वारा भौतिक लाभ या हानि से अति हर्षित या चिंतित न होना
अनन्य भक्ति	स्वयं को भक्ति की नव-विधाओं में संलग्न करना
एक निर्जन स्थान पर रहने की अभिलाषा और साधारण जन समुदाय से वैराग्य	भौतिकवादी मनुष्यों से मेल-जोल की इच्छा न रखना, भक्तों की संगति में रहना
आत्म-साक्षात्कार के महत्व को स्वीकार करना परम सत्य की दार्शनिक खोज	अनाश्यक खेल-कूद, भक्तिविहीन फिल्में देखने व भौतिकवादी सामाजिक गतिविधियों का परित्याग, समय नष्ट करने से बचना अनावश्यक (व्यर्थ) दार्शनिक विषयों व अन्वेषण का तिरस्कार करना

दैवी गुण
भगवद्गीता अध्याय १६, श्लोक १-३

गुण	वर्ण या आश्रम विशेष, जिनमें इस पर जोर है (यदि कोई है तो)	टिप्पणी
1. अभय/निर्भय	सन्यास	भगवान् की कृपा पर निर्भरता, आश्वस्त कि परमात्मा उसे पूर्ण सुरक्षा देंगे
2. सत्व संशुद्धि/आत्मशुद्धि	सभी	कठोरतापूर्वक विधि-विधानों का पालन करना (विशेषकर सन्यासीगण)
3. ज्ञान योग व्यवस्थिति/ आध्यात्मिक ज्ञान का अनुशीलन	सन्यास	दिव्य ज्ञान का अनुशीलन व वितरण करना, आध्यात्मिक ज्ञान का विशेषकर गृहस्थों को
4. दान	गृहस्थ	पचास प्रतिशत आदर्श, सतोगुण या उसके परे दिया जाना
5. आत्म-संयम	सभी (विशेषकर गृहस्थ)	विशेषत: धर्माविरुद्धो भूतेषु कामोऽस्मि
6. यज्ञ	सभी (विशेषकर गृहस्थ)	भौतिक संसाधन आवश्यक हैं, अत: मुख्यत: गृहस्थ इस युग के लिए सर्वोत्तम: संकीर्तन यज्ञ
7. वेद-अध्ययन	ब्रह्मचारी	विद्यार्थी जीवन, ब्रह्मचर्य व मन को वैदिक साहित्य के अध्ययन में लगाना
8. तपस्या	सभी (विशेषकर वानप्रस्थ)	मनुष्य जीवन (व अत: वैदिक संस्कृति का) लक्ष्य मुक्ति है
9. सरलता	सभी	सरल तथा सीधा (सत्य बोलने वाला)
10. अहिंसा	सभी	अहिंसा (किसी जीव के प्रगतिशील जीवन को न रोकना)
11. सत्यपरायणता	सभी	अपने स्वार्थ के लिए सत्य को तोड़ना-मरोड़ना नहीं, विशेषकर वैदिक निर्देशों को, प्रामाणिक व्यक्ति से श्रवण करना
12. क्रोधविहीनता	सभी	यदि कोई क्षुब्ध बनाए तो भी व्यक्ति को सहिष्णु बने रहना चाहिए
13. त्याग	सभी	चीजों को समुचित ढंग से कृष्ण की सेवा में प्रयोग करना
14. शांति	सभी	विचलित करने वाली भावनाओं से प्रभावित न होना, शांत, समभाव

15. छिद्रान्वेषण से घृणा करना	सभी	एक चोर को चोर कहना उचित है, किंतु अनाश्यक रूप से दूसरों के दोष न निकालना
16. सभी जीवों के लिए दया	सभी	आध्यात्मिक ज्ञान का वितरण
17. लोभविहीनता	सभी	लोलुपता : लोभी (दान व वैराग्य)
18. भद्रता	सभी	सभी जीवों के प्रति मित्रवत्
19. लज्जा	सभी	घृणास्पद कार्य नहीं करना
20. संकल्प	सभी	अपने प्रयासों में विफलता की स्थिति में उद्विग्न व निराश होने वाला
21. तेज	क्षत्रिय	रक्षा करने में सक्षमता
22. क्षमा	सभी (यहाँ पर विशेषकर क्षत्रिय)	छोटे-छोटे अपराधों को क्षमा कर देना
23. धैर्य	सभी (यहाँ पर विशेषकर क्षत्रिय)	कठिन परिस्थितियों मानसिक व भावनात्मक सबलता
24. शौच (पवित्रता)	सभी (यहाँ पर विशेषकर वैश्य)	आंतरिक (मन व हृदय, बाह्य (शरीर, अन्यों के साथ व्यवहार), कालाबाजारी व रिश्वतखोरी न करना
25. ईर्ष्या से मुक्ति	सभी	दूसरों के प्रति ईर्ष्याल, न होना
26. सम्मान की तीव्र अभिलाषा से मुक्ति	सभी (यहाँ पर विशेषकर शूद्र)	दूसरों का सम्मान अवश्य करना

भगवद्गीता से कुछ चुनी हुई विषय वस्तुएँ

विषय	अध्याय																	
	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13	14	15	16	17	18
आत्मा और देहान्तरण		11-29			13-16		5	5-6 23-28					20-22 30-35	14-15 18	7-10	19-20		
एक आत्म साक्षात्कार प्राप्त व्यक्ति के लक्षण		54-72		19-24	7-10 17-26	20-23			13-14			13-20		22-26		1-3		54
मन व इंद्रियों पर नियंत्रण		55-68	37-43	26-29	22-23	4-7 10-27 35-36		7-14	34			8				21		51-53 65
योग पद्धतियाँ		39-41 48-51	3-9	19-24	2-12 26-27	10-27 46-47	19	10-13 28			53-54	3-7 8-12 20	1-23 25-26	1-19	1-20		1-22	2-12 13-18 66
कर्मों का त्याग बनाम भक्तिमय कर्म		59	3-9		2-7													2-12
निराकारवाद को पराजित करना		12 23-24					7, 24 26	15	33	8		2-7		27	7			54
देवी देवताओं की पूजा			11-12	12			20-23		20-21 23-25								4	
जीव , ईश्वर और प्रकृति के बीच संबंध	21-22			5-11 35	13-16		4-7		4-10 22, 29-31	8-11			1-7 13-23	3-5	7 12-20			61, 66
भौतिक प्रकृति के गुण		45	27		14		14						20-22	1-19 26			1-22	19-40
वर्णाश्रम धर्म	39-43	31-38	5-16 22-26 29,33 35	13,15 26 31-33	29				32-33			10-12				1-3		7-9 41-48
भक्ति		49-51 61	9	9-11	29	47	1, 14 19	5, 7 10-14, 28	2,13,1 422,26 -27,29, 34	8-11	54-55	2,6-8, 13-20	11	26	18-19			46, 55 65-66
अनन्य भक्ति								14	2,13, 22, 26 29,34	8-11	54	6-7		26	18-20			65-66

पूर्व-स्वाध्याय (आंरभिक स्वयं अध्ययन)
बंद-पुस्तक परीक्षा के लिए प्रश्न

भगवद्गीता अध्याय १३

1. प्रकृति, पुरुष व ज्ञेयं शब्दों का हिंदी में तात्पर्य लिखिए। (13.1)
2. तैत्तिरीय उपनिषद् 2.9 के अनुसार ''ब्रह्म पुच्छं प्रतिष्ठा'' के पाँच स्तरों के नाम लिखिए। (13.5)
3. इस संसार के चौबीस तत्वों के नाम लिखिए। (13.6-7)
4. संस्कृत या हिंदी में ज्ञान के 20 विषयों का वर्णन कीजिए। (13.8-12)

भगवद्गीता अध्याय १४

5. महत् तत्व क्या है?(14.3)
6. सतोगुण में अवस्थित लोग किस प्रकार से बद्ध होते है?(14.6)
7. रजोगुण को कैसे पहचाना जा सकता है?(14.7)
8. तमोगुण के 3 परिणामों का उल्लेख कीजिए। (14.8)
9. सतोगुण, तमोगुण व रजोगुण में अवस्थित लोग किन दिशाओं में प्रगति करते है?(14.18)

भगवद्गीता अध्याय १५

10. ऊर्ध्व-मूलं और अधः शाखं का हिंदी में अर्थ लिखिए। (15.1)
11. अश्वत्थ वृक्ष के पत्ते किसकी ओर संकेत करते हैं?(15.1)
12. भौतिक जगत् का वृक्ष किस आधार पर स्थित है?(15.1)
13. इस अश्वत्थ वृक्ष का पोषण कैसे होता है?(15.2)
14. असंग-शस्त्रेन् का हिंदी में अर्थ लिखिए। (15.3-4)
15. तीन उदाहरण दे कर स्पष्ट कीजिए कि कृष्ण इस संसार का पालन कैसे करते है?(15.13-14)
16. क्षरः व अक्षरः शब्द क्या दर्शाते हैं?(15.17)
17. पुरुषोत्तम शब्द का तात्पर्य क्या है?(15.19)

भगवद्गीता अध्याय १६

18. निम्नलिखित शब्दों का हिंदी में अर्थ स्पष्ट कीजिए।
    सम्पदं (16.1-3), प्रवृत्ति (16.7), अनीश्वरं (16.8), उग्र कर्मणाः (16.9)
19. आसुरी व्यक्तित्व का एक सर्वोत्तम उदाहरण कौन था?(16.16)
20. ''माम् अप्राप्यैव कौन्तेय'' का हिंदी में अर्थ समझाइए। (16.20)
21. नर्क के तीन द्वारों के नाम लिखिए। (16.21)

भगवद्गीता अध्याय १७

22. तीन प्रकार की श्रद्धाओं के नाम लिखिए। (17.1)
23. सतोगुणी भोजन खाने के छह परिणामों का उल्लेख कीजिए। (17.8)
24. शरीर की तपस्या के आठ विषय कौन से है?(17.14)
25. ''स्वाध्याय अभ्यसन'' का हिंदी में अर्थ लिखिए। (17.13)
26. सतोगुण में दान के चार लक्षणों का उल्लेख कीजिए (17.20)
27. 'ॐ तत् सत्' नामक तीन शब्द क्या दर्शाते हैं?(17.23)

28. रजोगुण में वैराग्य के लक्षणों को सूचीबद्ध कीजिए। (18.6)
29. सभी कार्यों की सिद्धि के पाँच कारणों का उल्लेख कीजिए। (18.14)
30. सतोगुण में सुख के तीन लक्षणें का उल्लेख कीजिए। (18.37)
31. रजोगुण में सुख के तीन लक्षणों का उल्लेख कीजिए। (18.38)
32. तमोगुण में सुख के तीन लक्षणों का उल्लेख कीजिए । (18.39)
33. उन नौ गुणों के नाम लिखिए जिनके द्वारा ब्राह्मण कार्य करते हैं । (18.42)
34. संस्कृत या हिंदी में शरणागति के छः लक्षण लिखिए। (18.66)
35. इस गुह्य ज्ञान का वर्णन किसको कभी नहीं किया जा सकता? (18.67)

भगवद्गीता अध्याय १३-१८ से चुनी हुई उपमाएँ

१३.३

एक नागरिक अपने जमीन के टुकड़े के विषय में सब कुछ जानता है, किंतु राजा को न केवल अपने महल का, अपितु प्रत्येक नागरिक की भू-संपत्ति का ज्ञान रहता है। इसी प्रकार कोई भले ही अपने शरीर का स्वामी हो, किंतु परमेश्वर समस्त शरीरों के अधिपति हैं।

१३.७

सूर्य का उदाहरण दिया जाता है। सूर्य मध्याह्न के समय अपने स्थान पर रहता है, किंतु यदि कोई चारों ओर पाँच हजार मील की दूरी तक घूमता रहे और पूछे कि सूर्य कहाँ है, तो सभी लोग यही कहेंगे कि वह उसके सिर पर चमक रहा है। वैदिक साहित्य में यह उदाहरण यह दिखाने के लिए दिया गया है कि यद्यपि भगवान् अविभाजित, तथापि इस प्रकार अवस्थित हैं कि मानो वे विभाजित हों।

१३.३३

वायु जल, कीचड़, मल तथा अन्य वस्तुओं में प्रवेश करती है, फिर भी वह किसी वस्तु से लिप्त या मिश्रित नहीं होती। इसी प्रकार शरीरों में स्थित हो कर भी अपनी सूक्ष्म प्रकृति के कारण उनसे पृथक बना रहता है।

१४.३

मादा बिच्छू अपने अंडे धान के ढ़ेर में देती है और कभी-कभी यह कहा जाता है कि बिच्छू की उत्पत्ति धान के ढ़ेर से हुई। किंतु धान बिच्छू के जन्म का कारण नहीं है। वास्तव में अंडे माता बिच्छू ने दिए थे। इसी प्रकार भौतिक प्रकृति जीवों के जन्म का कारण नहीं होती। बीज भगवान् द्वारा प्रदत्त होता है और वे प्रकृति से उत्पन्न प्रतीत होते है।

१४.२६

यदि कोई भगवान् जैसे दिव्य स्तर पर स्थित नहीं है, तो वह भगवान् की सेवा नहीं कर सकता। उदाहरणार्थ, राजा का निजी सहायक बनने के लिए कुछ योग्यताएँ आवश्यक हैं।

१४.२७

राजा का सेवक लगभग राजा के स्तर के समान ही आनंद का भोग करता है। और इसीलिए शाश्वत सुख, अविनाशी सुख तथा शाश्वत जीवन भक्ति के साथ-साथ चलते हैं।

१५.८

भौतिक संसार में जीव जीवन की अपनी विविध अवधारणाओं को एक शरीर से दूसरे शरीर में उसी प्रकार ले जाता है, जिस प्रकार वायु सुगंध को ले कर चलती है। अतएव वह एक शरीर को धारण करता है और फिर उसे त्याग का दूसरा शरीर धारण करता है।

१५.९

चेतना मूलत: जल के समान निर्मल होती है, किंतु यदि हम जल में कोई रंग मिला दें तो उसका रंग बदल जाता है। इसी प्रकार, चेतना शुद्ध है क्योंकि आत्मा शुद्ध है किंतु भौतिक गुणों की संगति के अनुसार चेतना बदलती रहती है।

१५.१३

उनकी शक्ति प्रत्येक लोक को उसी प्रकार धारण किए रहती है, जिस प्रकार धूल को मुट्ठी मुट्ठी में बंद रहने पर धूल के गिरने का भय नहीं रहता, किंतु ज्यों ही धूल को वायु में फेंक दिया जाता है, वह नीचे गिर पड़ती है। इसी प्रकार ये सारे लोक जो वायु में तैर रहे हैं, वास्तव में भगवान् के विराट रूप की मुट्ठी में विद्यमान हैं।

१८.१७

कोई भी व्यक्ति, जो कृष्णभावनामृत में परमात्मा या भगवान के आदेशानुसार कर्म करता है, वह वध करते हुए भी वध नहीं करता। न ही कभी वह ऐसे वध का फल भोगता है। जब एक सैनिक अपने उच्चतर अधिकारी के आदेश से वध करता है तो उसे दण्डित नहीं किया जाता। किंतु, यदि वही सैनिक अपने व्यक्तिगत कारणों से वध करता है, तो निश्चित रूप से न्यायालय द्वारा उसका निर्णय किया जाता है।

१८.४८

प्रत्येक प्रयास किसी न किसी दोष से आवृत रहता है, वैसे ही जैसे अग्नि धुँए से आवृत रहती है। अतएव हे कुन्तीपुत्र! मनुष्य को चाहिए कि स्वभाव से उत्पन्न कर्म को, भले ही वह दोषपूर्ण क्यों न हो, कभी त्यागे नहीं।

१८.५५

विशते का तात्पर्य है कि मनुष्य अपने व्यक्तित्व सहित भगवान के धाम में, भगवान की संगति करने तथा उनकी सेवा करने के लिए प्रवेश कर सकता है। उदाहणार्थ, एक हरा पक्षी (शुक) हरे वृक्ष में इसलिए प्रवेश नहीं करता कि वह वृक्ष से तदाकार (लीन) हो जाए, अपितु वह वृक्ष के फलों का भोग करने के लिए प्रवेश करता है।

१८.६१

अत्यधिक तीव्र गति मोटरकार में बैठा व्यक्ति कम गति कार में बैठे व्यक्ति से अधिक तेज जाता है, भले ही जीव अर्थात चालक एक ही क्यों न हो। इसी प्रकार, परमात्मा के आदेश से भौतिक प्रकृति एक विशेष प्रकार के जीव के लिए एक विशेष शरीर का निर्माण करती है, जिससे वह अपनी पूर्व इच्छाओं के अनुसार कार्य कर सके।

इकाई ३ खुली पुस्तक मूल्यांकन प्रश्न

प्रश्न १

भगवद्गीता अध्याय 14 के श्लोकों व तात्पर्यों की सहायता से निम्नलिखित का अपने शब्दों में वर्णन कीजिए :

- वे तरीके जिनमें आप स्वयं रजोगुण व तमोगुण से प्रभावित होते हैं
- सतोगुण का अनुशीलन करने के व्यावहारिक उपाय।

(व्यक्तिगत उपयोग)

प्रश्न २

भगवद्गीता अध्याय 14 व 16 में दिए गए श्रील प्रभुपाद के तात्पर्यों से उन कथनों का उल्लेख कीजिए जो उनके भाव व अभियान के पहलुओं को दर्शाते हैं एवं अपने शब्दों में इस्कॉन के भविष्य के लिए इन पहलुओं के महत्व पर चर्चा कीजिए।

(भाव व अभियान)

प्रश्न ३

भगवद्गीता अध्याय 17 के श्लोक 1-3 व उनके तात्पर्यों की सहायता से अपने शब्दों में वर्णन कीजिए कि भौतिक प्रकृति के गुणों के अनुसार विभिन्न धार्मिक पद्धतियों का विश्लेषण कैसे किया जा सकता है।

(समझ)

प्रश्न ४

भगवद्गीता अध्याय 14 व 17 के उचित श्लोकों व तात्पर्यों तथा प्रभुपाद के प्रवचनों की सहायता से अपने शब्दों में वर्णन कीजिए:

- कृष्ण भावनामृत के अभ्यास में सतोगुण के अनुशीलन का महत्व
- किस प्रकार कृष्णभावनामृत सतोगुण पर निर्भर नहीं है।

(समझ)

इकाई 4 भक्ति रसामृत सिन्धु

इकाई की विषय-वस्तु

भक्ति रसामृत सिन्धु का संक्षिप्त अवलोकन शुद्ध भक्ति की परिभाषा	परिचय
शुद्ध भक्ति के छः लक्षण	अध्याय 1
साधना भक्ति	अध्याय 2-4
शुद्ध भक्ति का स्वतन्त्र स्वभाव	अध्याय 5
भक्ति कैसे करें	अध्याय 6-8
भक्ति के सिद्धांत	अध्याय 9-10
दिव्य सेवा के पहलू	अध्याय 11-14
रागानुग भक्ति	अध्याय 15-16
भगवद् प्रेम	अध्याय 17-19

भक्तिरसामृत सिंधु-प्रस्तावना से अध्याय १९ तक का संक्षिप्त अवलोकन

प्रथम लहरी सामान्य भक्ति (प्रस्तावना अध्याय १)

प्रस्तावना-भक्ति रस

श्रील प्रभुपाद हमें भक्तिरसामृत सिंधु का इतिहास देते हैं और इसके उद्देश्य का वर्णन करते हैं-प्रत्येक को शुद्ध भक्त के स्तर तक शिक्षित व उन्नत करना और भक्ति-रस की अवधारणा को समझना। भक्ति-रस भक्तिमय सेवा द्वारा प्राप्त आध्यात्मिक आनंद है, जिसका कोई भी व्यक्ति भक्तिमय सेवा के विज्ञान में प्रशिक्षित होकर आस्वादन का सकता है।

परिचय-मंगलाचरण और शुद्ध भक्ति का परिभाषा

पुस्तक के लक्ष्य के रूप में कृष्ण की स्थापना कर के, भगवान्, अपने गुरू और वैष्णवों को प्रणाम करके और पाठकों को आशीर्वचन देते हुए लेखक शुभत्व के प्राकट्य का आह्वान करते हैं। संपूर्ण पुस्तक का एक संक्षिप्त अवलोकन देने के बाद के बाद वे शुद्ध भक्ति की परिभाषा देते हैं, जो निबंध के शीर्षक कथन के समान है जिस पर संपूर्ण भक्ति रसामृत सिंधु का विस्तार होता है।

अध्याय १ शुद्ध भक्तिमय सेवा के लक्षण

शुद्ध भक्तिमय सेवा इतनी उत्कृष्ट व संतुष्टिदायक है कि कृष्ण सेवा में लगे भक्त इस सेवा के अतिरिक्त अन्य कुछ भी नहीं चाहते-यहाँ तक कि सालोक्य मुक्ति भी नहीं।

द्वितीय लहरी साधना भक्ति (अध्याय २-१६)

यह लहरी दो भागों में इस प्रकार विभाजित है-

भाग 1 (अध्याय 2-14)-वैधी साधना भक्ति
विधि-विधानों का पालन करना

भाग 2 (अध्याय 15-16)-रागानुग साधना भक्ति
सहज-स्वाभाविक भक्ति-अभ्यास

अध्याय २ - साधना भक्ति के सिद्धांत

साधना भक्ति पर विशेष बल देते हुए, भक्ति की तीन श्रेणियों का विवरण दिया गया है। कृष्ण को प्रसन्न (हरि तोषणं) करने के प्रति आकर्षण की व्यक्ति की साधना भक्ति अभ्यास के लिए पात्रता है और इस प्रक्रिया का सबसे महत्त्वपूर्ण हिस्सा है-सदैव कृष्ण का स्मरण रखना और उन्हें कभी नहीं भूलना।

अध्याय ३-भक्तिमय सेवा को स्वीकार करने के लिए पात्रता

भक्तिमय सेवा के आरंभ हेतु आवश्यक शर्त आकर्षक है, जो एक भक्त की दया से प्राप्त होता है। वैधी साधना भक्ति में उन्नति व्यक्ति की श्रद्धा के स्तर और शास्त्रों के ज्ञान पर निर्भर करती है। जब एक व्यक्ति शारीरिक अवधारणा से मुक्त हो जाता है और कृष्ण की सेवा की अनन्य अभिलाषा रखता है, तब वह शुद्ध भक्ति का अभ्यास करते के लिए योग्य है।

अध्याय ४- शुद्ध भक्तिमय सेवा इंद्रिय भोग व मोक्ष की अभिलाषा से मुक्त

''भक्त भुक्ति और मुक्ति की इच्छा से मुक्त होते हैं,'' इस कथन के समर्थन में और प्रमाण दिए गए हैं। वृंदावन में कृष्ण के भक्त सभी प्रकार की मुक्तियों की अभिलाषा को अस्वीकार करते हैं, यहाँ तक कि वैकुंठ में वैयक्तिक मुक्ति को भी।

अध्याय ५- शुद्ध भक्तिमय सेवा आत्म-निर्भर (स्वयं में पर्याप्त) व स्वतंत्र है

सामान्यत: आत्म साक्षात्कार का अभ्यास करने के लिए व्यक्ति को अनेक प्रारंभिक योग्यताएँ चाहिए, जैसे कि पवित्र जन्म, वैदिक अनुष्ठानों से शुद्धिकरण और वर्णाश्रम धर्म का पालन। भक्ति ऊपर बताई गई तीन शर्तों में से किसी पर भी निर्भर नहीं है। भक्तिमय सेवा जीव की स्वाभाविक स्वरूप स्थिति है। अतएव, भक्ति करने की प्रक्रिया और भक्ति के लिए पात्रता दोनों ही जन्म जाति, समुदाय व अन्य विधियों के विचारों से स्वतंत्र है।

अध्याय ६- भक्तिमय सेवा का अभ्यास करने के तरीके

श्रील रूप गोस्वामी भक्ति के 64 अंगों की सूची देते हैं।

अध्याय ७- भक्ति सिद्धांतों के संबंध में प्रमाण

यहाँ पर भक्तिमय सेवा के प्रथम अठारह विषयों : दस प्रवृत्तियों (करने योग्य) व प्रथम आठ निवृत्तियों (निषेधों): की और व्याख्या की गई है।

अध्याय ८- अपराध जिनसे बचना चाहिए

यहाँ पर भक्तिमय सेवा के उन्नीसवें विषय-भगवान् के पवित्र नाम के जप में या मंदिर में अर्चा विग्रह की पूजा में विभिन्न अपराधों से ध्यानपूर्वक बचने का वर्णन किया गया है। सहायक वैदिक साहित्य से बत्तीस अपराधों की सूची दी गई है और अन्य विशेषत: वाराह पुराण से सूचीबद्ध किए गए हैं। पद्म पुराण में वर्णित पवित्र नाम के प्रति दस अपराधों की सूची दी गई है।

अध्याय ९- शुद्ध भक्तिमय सेवा का अभ्यास करने के तरीके

भक्ति के 64 अंगों में से 20वें से 42वें तक के लिए शास्त्रीय प्रमाण दिए गए हैं, जिनमें अर्चा विग्रह की पूजा, जप और प्रार्थना पर जोर दिया गया है।

अध्याय १०- शुद्ध भक्तिमय सेवा का अभ्यास करने के तरीके

भक्ति के 64 अंगों में से 43वें से 46वें तक के लिए शास्त्रीय प्रमाण दिए गए हैं,
जिनमें श्रवण व स्मरण पर जोर दिया गया है।

अध्याय ११- शुद्ध भक्तिमय सेवा का अभ्यास करने के तरीके

भक्ति के 64 अंगों में से 47 वें से 53वें तक के लिए शास्त्रीय प्रमाण दिए गए हैं, जिनमें दास्यभाव, साख्यभाव व शरणागति पर जोर दिया गया है।

अध्याय १२- शुद्ध भक्तिमय, सेवा का अभ्यास करने के तरीके

भक्ति के 64 अंगों में से 54 वें से 64वें तक के लिए शास्त्रीय प्रमाण दिए गए हैं। इनमें से 5 अंगों को भक्तिमय सेवा का सबसे शक्तिशाली स्वरूप माना जाता है। इस अध्याय में उत्सवों और भक्तिमय सेवा के 5 शक्तिशाली स्वरूपों पर जोर दिया गया है।

अध्याय १३ - भक्तिमय सेवा के पाँच सर्वाधिक शक्तिशाली स्वरूप

यह अध्याय भक्ति के 64 अंगों की चर्चा को पूर्ण करता है। अध्याय 12 में बताए गए भक्तिमय सेवा के पाँच सर्वाधिक शक्तिशाली अंगो में संलग्न होने के अद्‌भुत परिणामों का विस्तार से वर्णन किया गया है और ऐसे विषयों की चर्चा आरंभ की गई है, जिन्हें त्रुटिपूर्वक भक्ति का अंग समझा जाता है।

अध्याय -१४ - भक्तिमय सेवा का अन्य आध्यात्मिक साधनाओं से संबंध

श्रील रूप गोस्वामी इसकी व्याख्या करना जारी रखते हैं कि सामान्यत: भक्ति का अंग समझे जाने वाले कुछ विषयों को उस प्रकार स्वीकार नहीं किया जा सकता।

अध्याय -१५ - स्वाभाविक भक्तिमय सेवा - रागात्मिका भक्ति

यह अध्याय रागात्मिका भक्ति, शाश्वत वृंदावनवासियों की स्वाभाविक भक्तिमय सेवा, का वर्णन करता है।

अध्याय -१६ - स्वाभाविक भक्तिमय सेवा का अभ्यास - साधना आदि

यहा रागानुग भक्ति, स्वाभाविक भक्तिमय सेवा की साधना का विवरण दिया गया है।

तृतीय लहरी भाव भक्ति - भावविभोर प्रेम में भक्तिमय सेवा

अध्याय १७ - भाव भक्ति की परिभाषा और प्राप्ति

यह अध्याय कृष्ण के प्रति भावविभोर प्रेम अर्थात् भाव भक्ति के स्तर तक उन्नत होने की प्रक्रिया का वर्णन करता है।

अध्याय १८ - भाव भक्ति के लक्षण

यह महत्वपूर्ण अध्याय एक ऐसे व्यक्ति के लक्षणों का अध्ययन करता है जिसने भावविभोर प्रेम विकसित कर लिया है। उनका सावधानीपूर्वक अध्ययन करके कोई भी एक वास्तविक भक्त के भाव-विभोर प्रेम और एक बहानेबाज के तथाकथित भावविभोर प्रेम के लक्षणों में अंतर कर सकता है।

चतुर्थ लहरी प्रेम भक्ति - भगवान की शुद्ध प्रेममय भक्ति

अध्याय १९ - प्रेम भक्ति

इस अध्याय में प्रेम-भक्ति और इसे प्राप्त करने के साधनों का वर्णन है। प्रेम का विकास क्रमबद्ध ढ़ंग से धीरे-धीरे होता है जिसका आरंभ श्रद्धा से होता है।

भक्ति रसामृत सिंधु अतिरिक्त टिप्पणियाँ व चार्ट

भक्ति रसामृत सिंधु पूर्व विभाग की रूपरेखा

सामान्य भक्ति

परिचय

1. मंगलाचरण
2. गुरू-वंदना
3. वैष्णव-वंदन
4. ग्रंथ-विभाग

भक्ति रसामृत सिंधु की पठन सामग्री

चार दिशाओं का सिंधु

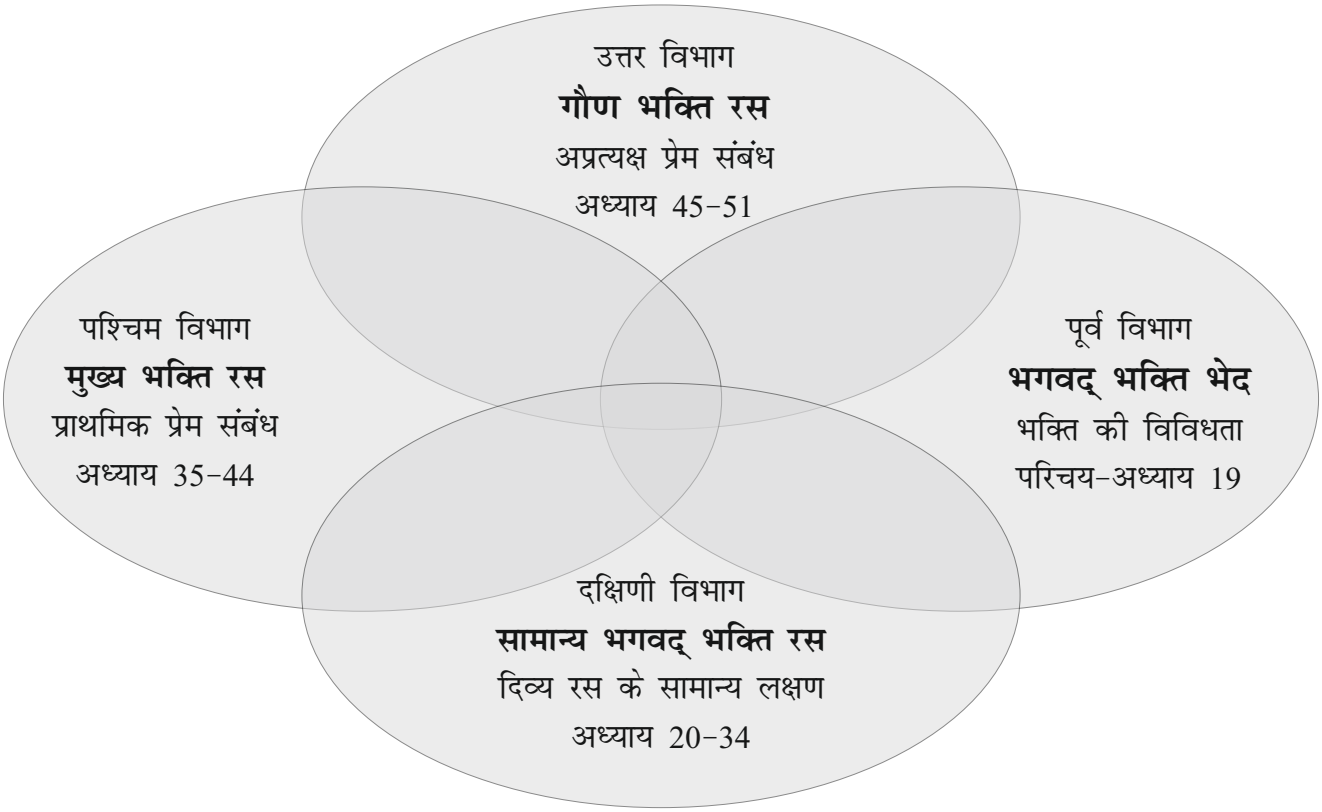

पूर्व विभाग का संक्षिप्त अवलोकन अध्याय १-१९

लहरियाँ (तरंगें)	विषय	अध्याय
1. सामान्य-भक्ति	सामान्य विवरण	परिचय - 1
2. साधना-भक्ति	साधना/अभ्यास	2 - 16
3. भाव-भक्ति	भाव विभोरता	17 - 18
4. प्रेम-भक्ति	शुद्ध भगवद् प्रेम	19

उत्तम भक्ति की परिभाषा

तटस्थ लक्षण

1.	*अन्य*	*अभिलाषिता*		*शून्य*
	दूसरी	इच्छाएँ		शून्य
11.	*ज्ञान*	*कर्म*	*आदि*	*अनावृत*
	अद्वैतवाद	सकाम कर्म	आदि	से आवृत नहीं

स्वरूप लक्षण

आनुकूल्येन

कृष्ण को उससे आनंद मिलना चाहिए

भक्त का कृष्ण के प्रति भाव अनुकूल होना चाहिए

कृष्ण

कृष्ण और विभिन्न विस्तार

कृष्ण की साजो - सामग्री

कृष्ण के शुद्ध भक्त

अनुशीलनं

सतत/ गतिविधि - पूर्ववर्ती आचार्यों का अनुसरण

उत्तम भक्ति के छः लक्षण

क्लेशाघ्नी - सभी प्रकार की भौतिक चिंताओं से विश्राम

भौतिक चिंताओं के 3 कारण

अ. पाप - पापमय गतिविधियों का फल

ब. बीजं - भौतिक इच्छाएँ

स. अविद्या - अज्ञानांधकार

शुभदा - परम शुभ

ह. सभी के लिए दया

य. सभी को आकर्षित करने वाली

र. दिव्य गुणों को उत्पन्न करती है

ल. उच्चतर सुख प्रदान करती है

मोक्ष-लघुताकृत - दुर्लभता से प्राप्त

व. स्वयं के प्रयासों से प्राप्त नहीं की जा सकती।

श. कृष्ण दुर्लभता से ही इसे प्रदान करते हैं

सान्द्रानंद विशेषात्मा - अगणनीय सान्द्र आनंद

श्री कृष्ण आकर्षिणी - कृष्ण को आकर्षित करने का एकमात्र साधन

स. कृष्ण की अंतरंग शक्ति के नियंत्रण के अन्तर्गत

पापमय कर्मों के चार प्रकार के प्रभाव

अप्रारब्धं फलं पापं कूटं बीजं फलोन्मुखं
क्रमेणैव प्रलीयेत विष्णु भक्ति रतात्मनां

पदम पुराण
(भगवद्गीता 9.2 से उद्धृत)

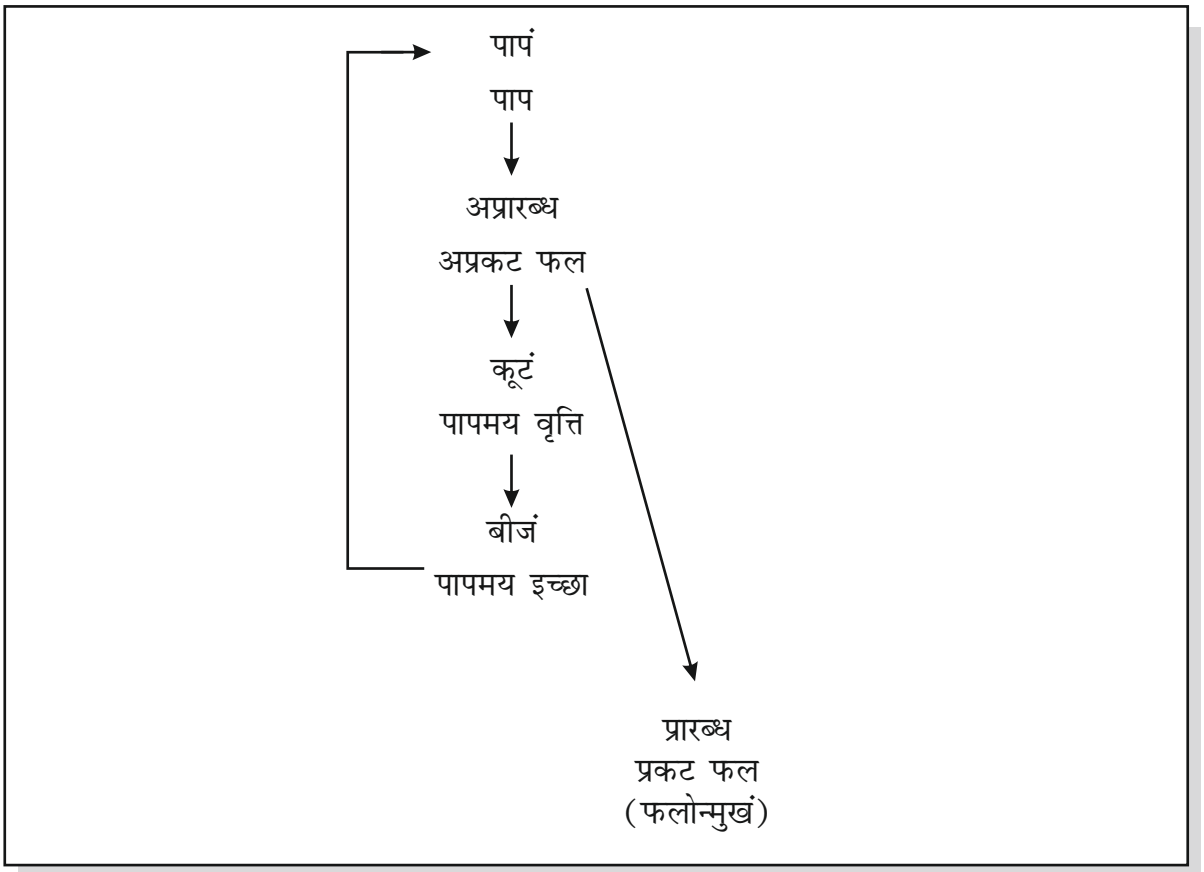

साधना भक्ति के ६४ अंग

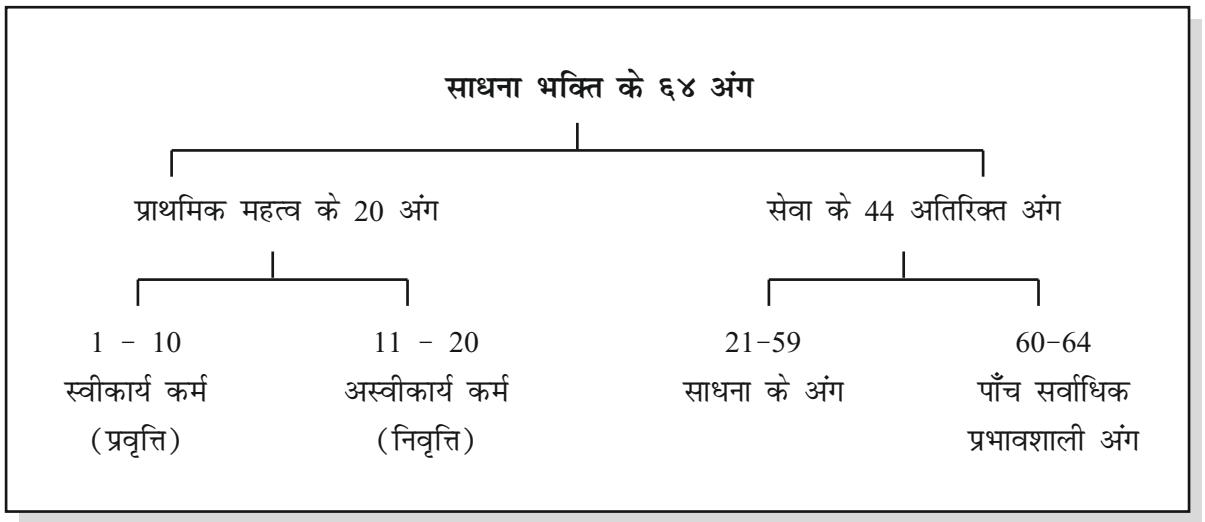

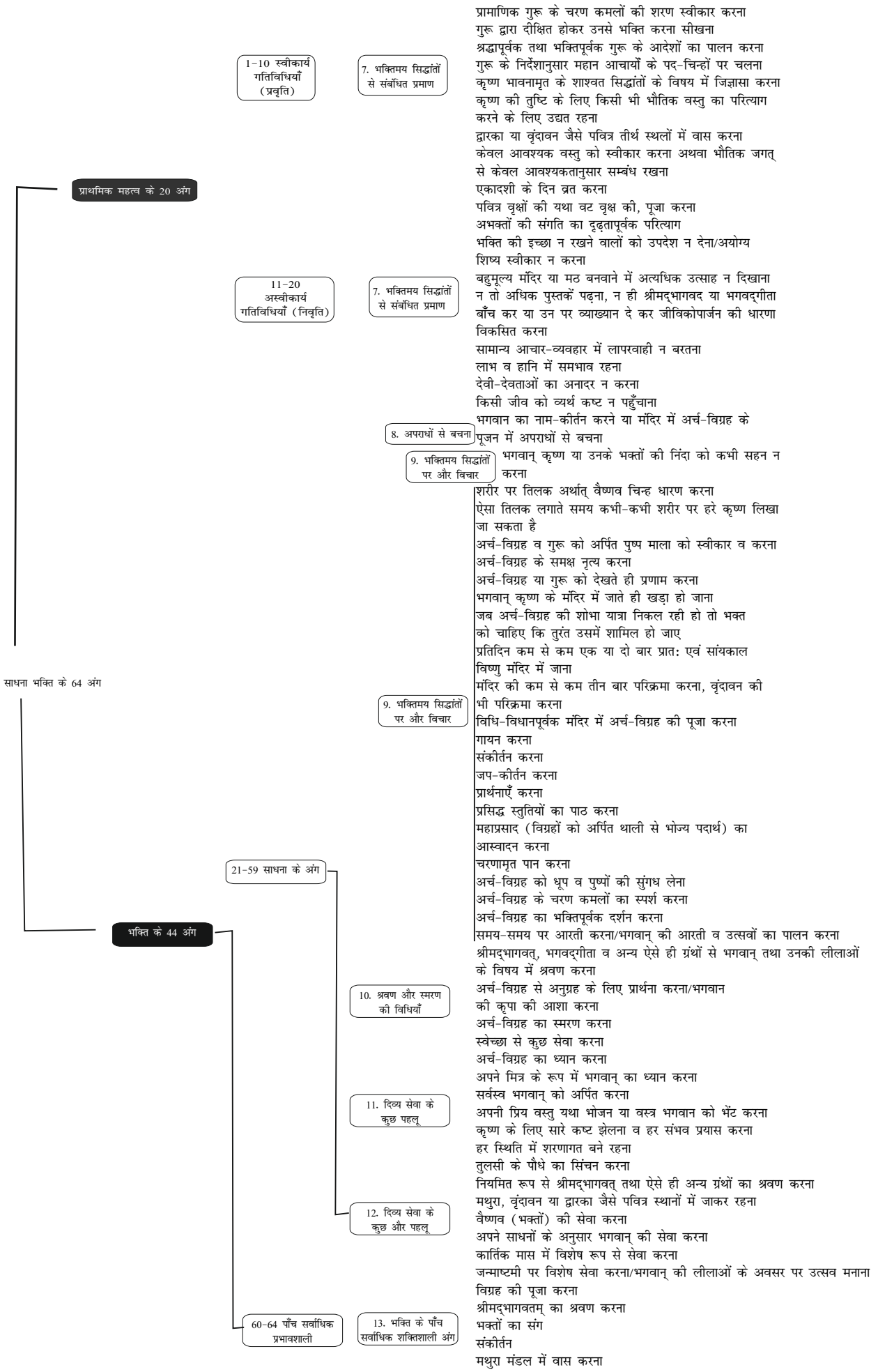
साधना भक्ति के 64 अंग
प्राथमिक महत्व के 20 अंग
1–10 स्वीकार्य गतिविधियाँ (प्रवृति)
7. भक्तिमय सिद्धांतों से संबंधित प्रमाण
प्रामाणिक गुरू के चरण कमलों की शरण स्वीकार करना
गुरू द्वारा दीक्षित होकर उनसे भक्ति करना सीखना
श्रद्धापूर्वक तथा भक्तिपूर्वक गुरू के आदेशों का पालन करना
गुरू के निर्देशानुसार महान आचार्यों के पद-चिन्हों पर चलना
कृष्ण भावनामृत के शाश्वत सिद्धांतों के विषय में जिज्ञासा करना
कृष्ण की तुष्टि के लिए किसी भी भौतिक वस्तु का परित्याग करने के लिए उद्यत रहना
द्वारका या वृंदावन जैसे पवित्र तीर्थ स्थलों में वास करना
केवल आवश्यक वस्तु को स्वीकार करना अथवा भौतिक जगत् से केवल आवश्यकतानुसार सम्बंध रखना
एकादशी के दिन व्रत करना
पवित्र वृक्षों की यथा वट वृक्ष की, पूजा करना
11–20 अस्वीकार्य गतिविधियाँ (निवृति)
7. भक्तिमय सिद्धांतों से संबंधित प्रमाण
अभक्तों की संगति का दृढ़तापूर्वक परित्याग
भक्ति की इच्छा न रखने वालों को उपदेश न देना/अयोग्य शिष्य स्वीकार न करना
बहुमूल्य मंदिर या मठ बनवाने में अत्यधिक उत्साह न दिखाना
न तो अधिक पुस्तकें पढ़ना, न ही श्रीमद्भागवद या भगवद्गीता बाँच कर या उन पर व्याख्यान दे कर जीविकोपार्जन की धारणा विकसित करना
सामान्य आचार-व्यवहार में लापरवाही न बरतना
लाभ व हानि में समभाव रहना
देवी-देवताओं का अनादर न करना
किसी जीव को व्यर्थ कष्ट न पहुँचाना
8. अपराधों से बचना
भगवान का नाम-कीर्तन करने या मंदिर में अर्च-विग्रह के पूजन में अपराधों से बचना
9. भक्तिमय सिद्धांतों पर और विचार
भगवान् कृष्ण या उनके भक्तों की निंदा को कभी सहन न करना
शरीर पर तिलक अर्थात् वैष्णव चिन्ह धारण करना
ऐसा तिलक लगाते समय कभी-कभी शरीर पर हरे कृष्ण लिखा जा सकता है
अर्च-विग्रह व गुरू को अर्पित पुष्प माला को स्वीकार व करना
अर्च-विग्रह के समक्ष नृत्य करना
अर्च-विग्रह या गुरू को देखते ही प्रणाम करना
भगवान् कृष्ण के मंदिर में जाते ही खड़ा हो जाना
जब अर्च-विग्रह की शोभा यात्रा निकल रही हो तो भक्त को चाहिए कि तुरंत उसमें शामिल हो जाए
प्रतिदिन कम से कम एक या दो बार प्रातः एवं सांयकाल विष्णु मंदिर में जाना
मंदिर की कम से कम तीन बार परिक्रमा करना, वृंदावन की भी परिक्रमा करना
9. भक्तिमय सिद्धांतों पर और विचार
विधि-विधानपूर्वक मंदिर में अर्च-विग्रह की पूजा करना
गायन करना
संकीर्तन करना
जप-कीर्तन करना
प्रार्थनाएँ करना
प्रसिद्ध स्तुतियों का पाठ करना
महाप्रसाद (विग्रहों को अर्पित थाली से भोज्य पदार्थ) का आस्वादन करना
चरणामृत पान करना
21–59 साधना के अंग
अर्च-विग्रह को धूप व पुष्पों की सुंगध लेना
अर्च-विग्रह के चरण कमलों का स्पर्श करना
अर्च-विग्रह का भक्तिपूर्वक दर्शन करना
भक्ति के 44 अंग
समय-समय पर आरती करना/भगवान् की आरती व उत्सवों का पालन करना
श्रीमद्भागवत्, भगवद्गीता व अन्य ऐसे ही ग्रंथों से भगवान् तथा उनकी लीलाओं के विषय में श्रवण करना
10. श्रवण और स्मरण की विधियाँ
अर्च-विग्रह से अनुग्रह के लिए प्रार्थना करना/भगवान की कृपा की आशा करना
अर्च-विग्रह का स्मरण करना
स्वेच्छा से कुछ सेवा करना
अर्च-विग्रह का ध्यान करना
अपने मित्र के रूप में भगवान् का ध्यान करना
11. दिव्य सेवा के कुछ पहलू
सर्वस्व भगवान् को अर्पित करना
अपनी प्रिय वस्तु यथा भोजन या वस्त्र भगवान को भेंट करना
कृष्ण के लिए सारे कष्ट झेलना व हर संभव प्रयास करना
हर स्थिति में शरणागत बने रहना
तुलसी के पौधे का सिंचन करना
नियमित रूप से श्रीमद्भागवत् तथा ऐसे ही अन्य ग्रंथों का श्रवण करना
12. दिव्य सेवा के कुछ और पहलू
मथुरा, वृंदावन या द्वारका जैसे पवित्र स्थानों में जाकर रहना
वैष्णव (भक्तों) की सेवा करना
अपने साधनों के अनुसार भगवान् की सेवा करना
कार्तिक मास में विशेष रूप से सेवा करना
जन्माष्टमी पर विशेष सेवा करना/भगवान् की लीलाओं के अवसर पर उत्सव मनाना
विग्रह की पूजा करना
60–64 पाँच सर्वाधिक प्रभावशाली
13. भक्ति के पाँच सर्वाधिक शक्तिशाली अंग
श्रीमद्भागवतम् का श्रवण करना
भक्तों का संग
संकीर्तन
मथुरा मंडल में वास करना

भाव के लक्षण

अव्यर्थ कालत्वं	समय का सदुपयोग
शांति	यत्नशीलता
विरक्ति	वैराग्य
मान शून्यता	अहंकारहीनता
आशा बंध	महान आशा
समुत्कण्ठा	वांछित सफलता प्राप्ति के लिए उत्कंठा
नाम-गाने सदा रूचि	हरे कृष्ण जप से आसक्ति
आसक्तिस् तद् गुणाख्याने	कृष्ण के गुणों के यशोगान की उत्कंठा
प्रीतिस् तद् वसति स्थले	धाम में रहने के प्रति आकर्षण

भक्ति रसामृत सिंधु, अध्याय 18, पृष्ठ 135
चैतन्य चरितामृत मध्य 23.18-19

प्रेम की प्राप्ति

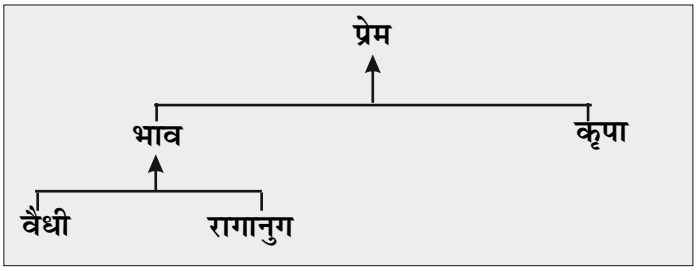

यह शुद्ध प्रेम परम् भगवान् को दो स्थितियों में समर्पित किया जा सकता है-भावविभोर होने के कारण और स्वयं परम् भगवान् की कृपा के कारण।

भक्ति रसामृत सिंधु, पृष्ठ 145

प्रेम के दो प्रकार

कृष्ण के प्रति स्वाभाविक आकर्षण, जो भगवान् की असाधारण कृपा से उपजता है, को दो शीर्षों में विभाजित किया जा सकता है-

माहात्म्य ज्ञान प्रेम	
(वैकुंठ)	
केवल प्रेम	
(वृंदावन)	

भक्तिरसामृत सिंधु, पृष्ठ 145

पूर्व स्वाध्याय (आरंभिक स्वयं अध्ययन)
बंद पुस्तक मूल्यांकन के लिए प्रश्न

प्रस्तावना

1. विशेषत: किसके लिए भक्ति रसामृत सिंधु को प्रस्तुत किया गया है?
2. निम्नलिखित शब्दों के अर्थ बताइए : रूपानुग, रस, चपल सुख, भोग-त्याग व अमृत।
3. भगवान चैतन्य का सार्वभौमिक सिद्धांत क्या है?
4. श्रील रूप गोस्वामी ने भक्तों और जन सामान्य के लिए कौन सा उदाहरण प्रस्तुत किया है?
5. श्रील रूप गोस्वामी चैतन्य महाप्रभु से पहली बार कहाँ मिले?

परिचय

6. संस्कृत या हिंदी में बारह रसों की सूची दीजिए।
7. प्रवृत्ति और निवृत्ति का अर्थ बताइए।
8. अनुशीलन शब्द का अर्थ बताइए।
9. 'ज्ञान-कर्मादि' शब्द किस की ओर संकेत करता है?

अध्याय १

10. शुद्ध भक्ति के छह लक्षणों का उल्लेख कीजिए।
11. पापमय कर्मों के चार प्रभावों का उल्लेख कीजिए।
12. प्रभुपाद द्वारा दिए गए परिपक्व पापमय कृत्यों के फलों के चार उदारण दीजिए।
13. यौगिक सिद्धियों व आधुनिक वैज्ञानिक सुधारों के मध्य तुलना किस ओर संकेल करती है?
14. एक जीवात्मा को भक्ति प्रदान करने के लिए कृष्ण दुर्लभता से क्यों सहमत होते हैं?
15. श्रील रूप गोस्वामी के विश्लेषण के अनुसार सुख के तीन स्रोतों की सूची दीजिए।
16. 'मदन मोहन मोहिनी' शब्द का अर्थ क्या है!

अध्याय २

17. भक्तिमय सेवा की तीन मुख्य श्रेणियों के नाम लिखिए।
18. साधना भक्ति के दो प्रकारों की सूची दीजिए।
19. सभी नियामक सिद्धांतों में सबसे आधारभूत कौन सा है?
20. जो भगवद्गीता के संदेश का प्रचार करता है, उसे भोजन कराने से क्या लाभ है?

अध्याय ३

21. नौसिखिया भक्त, जिन्होंने भक्ति का आरंभ अपनी विशिष्ट आत्मसंतुष्टि के मामले में राहत पाने के लिए किया है, के संबंध में दिए गए चार उदाहरणों का उल्लेख कीजिए।
22. किस स्थिति तक उन्नति किए बिना, कोई व्यक्ति परम् भगवान् की आराधना के सिद्धांत में संलग्न रह सकता है?

अध्याय ४

23. मुक्ति के पाँच प्रकारों की हिंदी व संस्कृत में सूची दीजिए।
24. जिन मुक्त लोगों ने मुक्ति के इन चार चरणों को प्राप्त कर लिया है, उन्हें कहाँ तक पदोन्नत किया जा सकता है

अध्याय ५

25. वैष्णव (भक्तिमय) मार्ग का रहस्य क्या है?

अध्याय ६

26. साधना भक्ति के 64 अंगों में से प्रथम 10 अंगों का संस्कृत या हिंदी में नाम लिखिए।
27. साधना के प्रथम 20 अंगों में से कौन से सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण माने जाते हैं?
28. साधना के पाँच सर्वाधिक शक्तिशाली अंगों का विवरण दीजिए।

अध्याय ७

29. आध्यात्मिक प्रगति के लिए क्या महत्त्वपूर्ण है?
30. बुद्ध के अनुयायियों को भक्त क्यों नहीं माना जा सकता है?
31. एकादशी के दिन उपवास करने का वास्तविक कारण क्या है?
32. दो प्रकार के अभक्तों के नाम लिखिए, जिनके संग से बचना चाहिए।

अध्याय ८

33. सेवा अपराधः व नाम अपराधः को परिभाषित कीजिए।
34. स्वयं भगवान् के प्रति अपराधी का उद्धार कैसे हो सकता है?

अध्याय ९

35. स्वयं के शरीर को चंदन से लेपित व आभूषित करने का क्या परिणाम होता है?
36. ऐसे निराकारवादी कौन हैं जो मंदिर में भगवान् को अर्पित पुष्पों व अगरबत्ती की सुगंध लेकर भक्त बन गए?
37. लौल्यम् व लालसामयी की परिभाषा दीजिए।
38. चरणामृत का पान करने से, यहाँ तक कि पापी व्यक्ति द्वारा भी, क्या परिणाम होता है?

अध्याय १०

39. दाय-भाक् की परिभाषा दीजिए।

अध्याय ११

40. नौ प्रकार की भक्तिमय सेवाओं में से कौन सी दो यदा-कदा ही दिखती हैं?

अध्याय १२

41. एक व्यक्ति जो वैष्णव शास्त्र घर पर रखता है, उसके पास सदैव क्या होता है?
42. भगवान् की पूजा से भी उच्चतर क्या होता है?

अध्याय १३

43. पाँच शक्तिशाली अंगों में से किसी एक के प्रति तनिक आसक्ति भी, यहाँ तक कि एक नौसिखिए भक्त में भी, क्या पैदा कर सकती है?

अध्याय १४

44. ऐसे भक्तों के उदाहरणों की सूची दीजिए, जिन्होंने नव-विधा भक्ति की एक विधा मात्र का पालन करके पूर्णता प्राप्त की।

अध्याय १५

45. स्वाभाविक भक्ति सरलता से कहाँ देखी जा सकती है?
46. रागा शब्द का अर्थ क्या है?
47. रागात्मिका भक्ति व रागानुग भक्ति को परिभाषित कीजिए।

अध्याय १६

48. ब्रजवासियों (वृंदावनवासियों) के पद-चिन्हों के अनुसरण की उत्कंठा किस अवस्था में प्राप्त की जा सकती है?
49. प्राकृत-सहजिया को परिभाषित कीजिए ।
50. माधुर्य प्रेम की दो श्रेणियों का संक्षिप्त वर्णन कीजिए।

अध्याय १७

51. भगवान के प्रति शुद्ध प्रेम का पहला लक्षण क्या है?

अध्याय १८

52. कृष्ण के प्रति भाव-विभोर प्रेम उत्पन्न कर लेने वाले व्यक्ति के नौ लक्षणों का उल्लेख कीजिए।

अध्याय १९

53. संस्कृत या हिंदी में प्रेम-भक्ति के दो प्रकारों के नाम लिखिए।
54. संस्कृत या हिंदी में श्रद्धा से प्रेम तक के नौ चरणों के नाम लिखिए।

भक्ति रसामृत सिंधु से चुनी हुई उपमाएँ

प्रस्तावना

भक्ति रसामृत सिंधु हमें यह शिक्षा देगी कि किस प्रकार वह एक स्विच दबाया जाए जिससे तुरंत सर्वत्र प्रकाश फैल जाए।

परिचय

जो शार्क मछलियाँ सागर में रहती हैं, वे उन नदियों की परवाह नहीं करती जो सागर में आकर मिलती रहती है। भक्तगण सदैव भक्ति रूपी सागर में रहते हैं और नदियों की तनिक भी परवाह नहीं करते। दूसरे शब्दों में, जो शुद्ध भक्त हैं वे भगवान् की दिव्य प्रेम-भक्ति रूपी सागर में सदैव रहते हैं और उन अन्य विधियों की परवाह नहीं करते, जो सागर में गिरने वाली क्रमशः धीमी गति वाली नदियों के तुल्य हैं।

जिस प्रकार सागर के बीच उठने वाले उद्गारों से बहुत ही कम क्षति पहुँच सकती है, उसी प्रकार जो लोग भगवद् भक्ति के विरुद्ध हैं और जो चरम दिव्य अनुभूति के विषय में अनेक दार्शनिक मत प्रस्तुत करते हैं, वे भक्ति के इस महान सागर को तनिक भी विक्षुब्ध नहीं कर सकते।

अध्याय १

जंगल की भूमि पर अनेक सर्प रहते हैं, किंतु जब जंगल में आग लगती है तो उससे सूखी पत्तियाँ-झाड़ियाँ आदि जल जाती हैं, जिससे सर्प भी तुरंत अग्नि की चपेट में आ जाते हैं। चौपाये जानवर अग्नि से दूर भाग सकते हैं या भागने का प्रयास तो कर ही सकते हैं, किंतु सर्पों का तुरंत सफाया हो जाता है। इसी प्रकार कृष्ण भावनामृत की प्रज्वलित अग्नि इतनी प्रबल होती है कि अज्ञान के सर्प तुरंत विनष्ट हो जाते हैं।

जिस तरह रानी की दासियाँ व निजी सेविकाएँ आदरतापूर्वक व नम्रतापूर्वक उसका अनुसरण करती हैं, ठीक उसी प्रकार धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष से मिलने वाले सुख भगवद् भक्ति का अनुसरण करते हैं।

अध्याय २

अपनी इंद्रियों तथा मन को इस कार्य में लगाने के लिए कुछ निर्धारित (निश्चित) विधियाँ हैं जिनसे प्रेममय कृष्ण के प्रति हमारी सुप्त चेतना उसी प्रकार जागृत हो उठती हैं, जिस तरह एक शिशु थोड़े अभ्यास से चलने लगता है।

अध्याय ५

जो भी व्यक्ति वैष्णव संप्रदाय में विधिवत् दीक्षित हो जाता है, वह निश्चित रूप से ब्राह्मण बन जाता है, जिस तरह कांसा नामक धातु पारे के साथ मिलकर स्वर्ण में बदल जाती है।

अध्याय ७

कात्यायन-संहिता में कहा गया है कि यदि किसी को लोहे के पिंजड़े में या धधकती अग्नि में रहने के लिए बाध्य किया जाए तो उसे यह स्थिति स्वीकार कर लेनी चाहिए, किंतु उन अभक्तों के साथ रहना कदापि स्वीकार नहीं करना चाहिए जो भगवान् के परमत्व के सर्वथा विरुद्ध हैं।

विष्णु रहस्य में भी यह उल्लेख है कि मनुष्य भले ही एक सर्प, व्याघ्र, या मकर का आलिंगन कर ले, किंतु ऐसे व्यक्तियों की संगति कदापि न करे जो विभिन्न देवी-देवताओं के उपासक हैं और भौतिक इच्छा के वशीभूत हैं।

अध्याय १२

जब आम पक जाता है तो उस वृक्ष का सबसे बड़ा उपहार होता है। उसी प्रकार श्रीमद्भागवतम् को वैदिक वृक्ष का पका हुआ फल माना जाता है।

संगति बहुत महत्त्वपूर्ण होती है। यह उस मणि के समान है जो अपने समक्ष रखी किसी भी वस्तु को स्वयं में प्रतिबिम्बत करती है। इसी प्रकार यदि हम पुष्प जैसे भगवद्भक्तों की संगति करते हैं और हमारे हृदय पारदर्शी मणि जैसे स्वच्छ हैं तो यहाँ भी वैसी ही घटना घटेगी ।

अध्याय १७

कभी-कभी यह देखा जाता है कि एक व्यक्ति, जो कभी भी विद्यालय या कालेज न गया हो, बड़ा विद्वान बन जाता है ओर बड़े-बड़े विश्वविद्यालय उसे मानद उपाधियाँ प्रदान कर सकते हैं। किंतु इसका अर्थ यह नहीं कि व्यक्ति स्कूल जाने से भी जी चुराए और यह आशा करे कि कोई विश्वविद्यालय उसे स्वतः मानद उपाधियाँ प्रदान करेगा। इसी प्रकार मनुष्य को चाहिए कि निष्ठापूर्वक भक्ति के विधि विधानों को सम्पन्न करे और साथ ही कृष्ण या उनके भक्त की कृपा की आशा भी रखें।

भक्ति रसामृत सिंधु से स्मरण करने के लिए श्लोक

भक्ति रसामृत सिंधु १.१.११

अन्याभिलाषिता शून्यं
ज्ञान कर्मादि अनावृतं
आनुकूल्येन कृष्णानु-
शीलन भक्तिर उत्तमा

अन्य अभिलाषिता शून्यं-भगवान कृष्ण की सेवा के अतिरिक्त अन्य सभी इच्छाओं के बिना या भौतिक इच्छाओं के बिना (उदाहरणार्थ मांसाहार, अवैध संबंध, जुआ व नशापान की इच्छाएँ), ज्ञान-एकात्मवादी मायावादियों के दर्शनशास्त्र के ज्ञान से, कर्म-सकाम कर्म से, आदि-कृत्रिम रूप से वैराग्य के अभ्यास द्वारा, योग के यांत्रिक अभ्यास द्वारा, सांख्य दर्शन और इसी प्रकार के अन्य अध्ययनों द्वारा, अनावृतं-न ढँका हुआ, आनुकूल्येन-अनुकूलन, कृष्ण अनुशीलन-कृष्ण से संबंधानुसार सेवा का अनुशीलन, भक्तिःउत्तमा-प्रथम श्रेणी की भक्तिमय सेवा

जब प्रथम श्रेणी की भक्तिमय सेवा उत्पन्न होती है तो व्यक्ति को सभी प्रकार की भौतिक इच्छाओं, एकात्मवादी मायावादी दर्शन से प्राप्त ज्ञान तथा सकाम कर्म से पूर्णतः मुक्त होना चाहिए। भक्त को निरंतर कृष्ण की इच्छानुसार अनुकूलतापूर्वक कृष्ण की सेवा करनी चाहिए।

भक्ति रसामृत सिंधु 1.1.12

सर्वोपाधि-विनिर्मुक्तं
तत् परत्वेन् निर्मलं
ऋषिकेण ऋषिकेश
सेवनं भक्ति उच्यते

सर्व-उपाधि-विनिर्मुक्तं-सभी प्रकार की भौतिक उपाधियों से मुक्त, अथवा परम् भगवान् की सेवा के अतिरिक्त अन्य सभी इच्छाओं से मुक्त, तत् परत्वेन-परम भगवान् की सेवा के एकमात्र उद्देश्य से, निर्मलं-मनोकल्पित दार्शनिक अनुसंधान या सकाम कर्म के प्रभावों से दूषित न रहना, ऋषिकेण-इंद्रियों के स्वामी की, सेवनं-इंद्रियों को संतुष्ट करने की सेवा, भक्तिः-भक्तिमय सेवा, उच्यते-कहलाती है।

भक्ति का अर्थ है अपनी समस्त इंद्रियों को परम् भगवान् की सेवा में लगाना जो सभी इंद्रियों के स्वामी हैं। जब आत्मा भगवान् की सेवा करती है तो इसके दो फलीभूत परिणाम होते हैं। व्यक्ति सभी भौतिक उपाधियों से मुक्त हो जाता है और भगवान् की सेवा में नियोजित मात्र होने से व्यक्ति की इंद्रियों का शुद्धिकरण हो जाता है।

भक्ति रसामृत सिंधु १.२.२३४

अतः श्रीकृष्ण नामादि
न भवेद् ग्राह्यं इंद्रियैः
सेवोन्मुखे हि जिह्वादौ
स्वयं एव स्फुरति अदः

अतः-इसलिए (चूंकि कृष्ण का नाम, रूप, गुण, लीला आदि सभी परम् स्तर पर हैं), श्री-कृष्ण-नामादि-भगवान् कृष्ण के नाम, रूप, गुण, लीला इत्यादि, न-नहीं, भवेद्-हो सकता है, ग्राहयं-अनुभव किया जाना, इंद्रियैः-स्थूल भौतिक इंद्रियों द्वारा, सेवा-उन्मुखे-भगवान् की सेवा में संलग्न व्यक्ति को (जब एक व्यक्ति स्वयं को भगवान् के नियंत्रण व आदेश में लगा देता है, उस समय आध्यात्मिक शक्ति या हरे, धीरे-धीरे भगवान् को उसके समक्ष प्रकट कर होती है), हि-निश्चित् रूप से, जिह्वा-आदौ-जिह्वा के साथ शुरू हो कर, स्वयं-व्यक्तिगत रूप से, एव-निश्चय ही, स्फूर्ति-प्रकट, अदः-वे (कृष्ण के नाम, रूप, गुण आदि)

चूंकि कृष्ण के नाम, रूप, गुण, लीला आदि सभी परम दिव्य धरातल पर विद्यमान है, अतः भौतिक इंद्रियाँ उनकी सराहना व अनुभव नहीं कर सकती हैं। जब एक बद्ध जीव कृष्ण भावनामृत में जागृत् होता है और अपनी जीभ से भगवान् के पवित्र नामों के जप और भगवान् के प्रसाद को ग्रहण करने के द्वारा सेवा अर्पित करता है, तो उसकी जीभ शुद्ध हो जाती है और व्यक्ति धीरे-धीरे यह पहचान पाता है कि कृष्ण वास्तव में कौन हैं।

(मूलतः पद्म पुराण से, चैतन्य चरितामृत मध्य 17.136 से उद्धृत)

भक्ति रसामृत सिंधु १.२.२५५-६

अनासक्तस्य विषयान्
यथार्हम् उपयुंजतः
निर्बन्धः कृष्ण सम्बन्धे
युक्तं वैराग्यं उच्यते

अनासक्तस्य-वह जो आसक्ति से रहित है, विषयान्-भौतिक इंद्रिय विषयों के प्रति, यथार्हम्-उपयुक्तता के अनुसार, उपयुंजतः-संलग्न रहना, निर्बन्धः-बंधन के बिना, कृष्ण संबंधे-कृष्ण से संबंध के अनुसार, युक्तं-समुचित, वैराग्य-त्याग, उच्यते-कहा जाता है।

जब मनुष्य किसी वस्तु के प्रति आसक्त न रहते हुए कृष्ण से संबंधित हर वस्तु को स्वीकार कर लेता है, तो वह सभी प्रकार के परिग्रह भाव से परे उचित धरातल पर विद्यमान होता है।

इकाई ४ खुली पुस्तक मूल्यांकन प्रश्न

प्रश्न १

स्वरूप व तटस्थ लक्षण, प्रभुपाद की टिप्पणियों, उदाहरणों व विशिष्ट संस्कृत शब्दों की सहायता से अपने शब्दों में शुद्ध भक्तिमय सेवा की परिभाषा की व्याख्या कीजिए।

(समझ)

प्रश्न २

प्रभुपाद की टिप्पणियों, उचित उपमाओं व अन्य संबंधित शास्त्रीय प्रमाणों का संदर्भ लेते हुए अपने शब्दों में व्याख्या कीजिए कि कैसे शुद्ध भक्तिमय सेवा में सभी चार प्रकार के पापमय फलों को नष्ट करने की शक्ति है।

(समझ)

प्रश्न ३

शुद्ध भक्तिमय सेवा के छह लक्षणों में से प्रत्येक की अपने शब्दों में व्याख्या कीजिए और यह भी बताइए कि वे किन स्तरों पर प्रकट होते हैं। भक्तिरसामृत सिंधु अध्याय 1 से समुचित संदर्भ दीजिए।

(समझ)

प्रश्न ४

भक्तिरसामृत सिंधु अध्याय 2 की सहायता से साधनाभक्ति की विधि का अपने शब्दों में वर्णन कीजिए। अपने उत्तर में वैधी और रागानुग साधना भक्ति के मध्य अंतर स्पष्ट कीजिए। भक्तिरसामृत सिंधु अध्याय 2 से उचित उपमाओं व तत्संगत टिप्पणियों का संदर्भ दीजिए।

प्रश्न ५

श्रील रूप गोस्वामी द्वारा स्थापित किए गए सिद्धांतों के संबंध में पाश्चात्य देशों के सभी वर्गों से सदस्यों को स्वीकार करने की पद्धति की अपने शब्दों में चर्चा कीजिए।
भक्तिरसामृत सिंधु अध्याय 5 से शास्त्रीय प्रमाणों व पूर्ववर्ती आचार्यों द्वारा उदाहरणों का संदर्भ दीजिए।

प्रश्न ६

भक्तिरसामृत सिंधु अध्याय 6 के अनुसार सिद्धांत व व्यावहारिक उपयोग के मध्य अंतर की व्याख्या कीजिए। इस्कॉन के भावी विकास के लिए इस अंतर के महत्त्व पर चर्चा कीजिए। अपने उत्तर में भक्ति रसामृत सिंधु अध्याय 6 से समुचित संदर्भ दीजिए।

(समझ/मूल्यांकन/भाव व अभियान)

प्रश्न ७

श्रील प्रभुपाद के भक्ति रसामृत सिंधु अध्याय 10 के कथनों की सहायता से व्यक्ति के स्वयं के जीवन में कष्टों के प्रति उचित भाव की अपने शब्दों में व्याख्या कीजिए। समुचित व्यक्तिगत उदाहरणों द्वारा स्पष्ट कीजिए कि कैसे इस भाव का विकास आपके जीवन में कष्टों का सामना करने में आपकी सहायता कर सकता है।

(व्यक्तिगत उपयोग)

प्रश्न ८

भक्तिरसामृत सिंधु अध्याय 11 व 12 की सहायता से साधना भक्ति के पाँच सबसे महत्वपूर्ण अंगों के महत्व की व्याख्या कीजिए। अपने शब्दों में उन व्यावहारिक उपायों की चर्चा कीजिए, जिनके द्वारा आप साधना भक्ति के पाँच सबसे महत्वपूर्ण अंगो के अपने अभ्यास में सुधार कर सकते हैं।

(व्यक्तिगत उपयोग)

प्रश्न ९

भक्तिरसामृत सिंधु अध्याय 15 व 16 की सहायता से इस्कॉन भक्तों द्वारा रागानुग भक्ति के अभ्यास के प्रति उचित भाव की अपने शब्दों में चर्चा कीजिए।

(मूल्यांकन / भाव और अभियान)

इकाई ५
उपदेशामृत और श्री ईशोपनिषद्
श्री ईशोपनिषद्

इकाई की विषय-वस्तु

परिचय

वेदों का विभाजन	उपनिषद्/श्रुति स्मृति
चार दोष	
तीन प्रमाण	प्रत्यक्ष/अनुमान/शब्द
	परम्परा

आवाहन (ईश-स्तुति)

ऊँ पूर्णम्	परिपूर्ण एवं सभी प्रकार से पूर्ण
पूर्णम् एववशिष्यते	पूर्ण शेष बचा रहता है
मंत्र १-३ :	**भगवान् का स्वामित्व**
मंत्र 1	ईशावास्यं/भागवत् साम्यवाद
	तेन त्यक्तेन भुंजीथा-केवल आवश्यक वस्तुओं को स्वीकार करे
मंत्र 2	ईशावास्यं का उपयोग-दीर्घजीवन
मंत्र 3	आत्म हा-आत्मा का हनन करने वाला
मंत्र 4-8	महाभागवत का दृष्टिकोण
मंत्र 4	स्थिर/वेगवान (शक्ति का विस्तार)
मंत्र 5	विरोधाभास भगवान की अचिंत्य शक्ति को प्रमाणित करते हैं
मंत्र 6-7	एकत्वं अनुपश्यत:-प्रामाणिक स्रोत से श्रवण द्वारा एकत्व को देखें
	झूठा मानव प्रेम
मंत्र 8	शुद्धं अपापविद्धं
मंत्र ९-१४	**निरपेक्ष व सापेक्ष**
मंत्र 9-11	ज्ञान व अज्ञान
	संतुलित कार्यक्रम
मंत्र 12-14	निरपेक्ष (पूर्व व परम) की पूजा करें/सापेक्ष-देवी-देवता पूजा
	और निराकारवाद
मंत्र १५-१८	**भगवान के आध्यात्मिक स्वरूप के उद्घाटन हेतु प्रार्थनाएँ**
मंत्र 15	सत्यस्यापिहितं मुखं
	आपका वास्तविक मुखमंडल आपके चमचमाते तेज से ढँका हुआ है।
मंत्र 17	ॐ क्रतो स्मर कृतं स्मर
	मैंने आपके लिए जो कुछ किया है उसे स्मरण करें
मंत्र 18	श्री ईशोपनिषद व्यक्ति को कृष्ण के व्यक्तित्व के समीप लेकर आता है

श्री ईशोपनिषद् का संक्षिप्त अवलोकन

परिचय

परिचय में श्रील प्रभुपाद वेदों की परिभाषा की स्थापना करते हैं और वेदों में मार्गदर्शन लेने की आवश्यकता को समझाते हैं। श्री ईशोपनिषद् श्रुति का अंग होने के कारण प्रत्यक्ष रूप से वैदिक साहित्य है।

आहवान

आहवान में इस पुस्तक का लक्ष्य बताया गया है : परम सत्य, पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान। उनके विभिन्न प्रकार के पूर्णत्व को बार-बार समझाने के पश्चात्, श्री ईशोपनिषद् पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् की परम स्थिति व शक्तिमत्ता को स्थापित करता है।

मंत्र १-३ भगवान् के नियम व स्वामित्व

आहवान में वर्णन है कि भगवान् पूर्ण रूप से संपूर्ण हैं व उनकी शक्तियाँ भी पूर्ण हैं। श्रील प्रभुपाद टिप्पणी करते हैं कि 'परम पूर्ण के अधूरे ज्ञान के कारण ही विभिन्न प्रकार की अपूर्णताओं का अनुभव होता है।' मंत्र 1 वर्णन करता है कि जीवात्माएँ कृष्ण के साथ संबंध के अनुसार कार्य करके किस प्रकार से पुनः अपने पूर्णत्व के अनुभव को पुनर्प्राप्त कर सकती हैं। यह कार्य ईशावास्यं चेतना कहलाता है। मंत्र 2 ईशावास्यं चेतना में कार्य करने के लाभ की व्याख्या करता है: व्यक्ति कर्म फलों से मुक्त हो जाता है और मुक्त धरातल पर कार्य करता है। ऐसी गतिविधियाँ ही मुक्ति का एकमात्र मार्ग हैं। मंत्र 3 उन लोगों के भविष्य की चर्चा करता है, जो भगवान् के स्वामित्व को स्वीकार करने में विफल रहते हैं और इस कारणवश विकर्मी ढंग से कार्य करते हैं।

मंत्र ४-८ महाभागवत् का दृष्टिकोण

मंत्र 4 वर्णन करता है कि ऐसे लोग भगवान की स्थिति को समझने में क्यों विफल रहते हैं : भगवान् भौतिक गणनाओं के परे हैं और इसलिए उन्हें तभी जाना जा सकता है जब वे स्वयमेव स्वयं को प्रकट करते हैं। मंत्र 5 इस चर्चा को जारी रखते हुए व्याख्या करता है कि भगवान् के पास अचिंत्य शक्तियाँ हैं जिनके कारण उन लोगों को उनका ज्ञान नहीं मिलता, जिन्हें उनकी कृपा प्राप्त नहीं है। मंत्र 6 उस व्यक्ति के दृष्टिकोण का वर्णन करता है जो कृष्ण को सभी जगह देख सकते हैं, अर्थात् महाभागवत् का। मंत्र 7 महाभागवत की चेतना का वर्णन करना जारी रखता है, जिसका परिचय मंत्र 6 में दिया गया था। मंत्र 8 भगवान् के ऐसे कुछ गुणों की व्याख्या करता है जिस दृष्टि से महाभागवत् उन्हें जानते हैं, जैसा कि मंत्र 6 और 7 में बताया गया है।

मंत्र ९-१४ : निरपेक्ष (परम) व सापेक्ष

- **९-११ : ज्ञान की दृष्टि से**
- **१२-१४ : पूजा की दृष्टि से**

मंत्र 9 दो प्रकार के व्यक्तियों का वर्णन करता है जिन्हें कृष्ण का ज्ञान नहीं है, वे जो निरे मूर्ख व अज्ञानी हैं तथा वे जो भौतिक विद्वत्ता के अनुयायी है व इसे ही समस्त ज्ञान का अंत मानते हैं। ये दोनों प्रकार के व्यक्ति भगवान् के स्वामित्व को अस्वीकार करते हैं और फलस्वरूप अज्ञान से सबसे अंधकारमय लोकों में पतित हो जाते हैं। मंत्र 9 अज्ञान व झूठे ज्ञान के अनुशीलन का परिणाम बताता है। मंत्र 10 वर्णन करता है कि सच्चा ज्ञान इन दोनों परिणामों से भिन्न एक अन्य परिणाम देता है। यह वास्तविक विद्या व भ्रामक विद्या (अविद्या) में अंतर करने के लिए धीर पुरुष द्वारा मार्गदर्शन की आवश्यकता पर भी बल देता है। मंत्र 11 व्याख्या करता है कि कैसे व्यक्ति को भौतिक व आध्यात्मिक ज्ञान की तुलनात्मक स्थिति को जानना चाहिए, जिससे वह भौतिक शक्ति को

पार करके अमृत्व प्राप्त कर सके। जिस प्रकार श्लोक 9-11 में ज्ञान व अज्ञान की तुलना और प्रत्येक के अनुयायी के क्रमशः गंतव्य का वर्णन किया गया है, उसी प्रकार मंत्र 12-14 में सापेक्ष व परम सत्य की पूजा की व्याख्या की गई है। जिस प्रकार गलत ज्ञान का अनुशीलन बंधनकारी हो सकता है, उसी प्रकार परम सत्य की अनुचित अवधारणा भी बद्धता का कारण बन सकती है। मंत्र 19 वर्णन करता है कि व्यक्ति जब धीर पुरूष के मार्गदर्शन में परम सत्य को जानने का प्रयास करता है तो उसे अलग परिणाम प्राप्त होता है। मंत्र 14 में बताया गया है कि व्यक्ति को मुक्ति प्राप्त करने के लिए आध्यात्मिक और भौतिक शक्तियों को उनकी विशिष्ट अवस्था के अनुसार उचित ढंग से जानना चाहिए।

मंत्र १५-१८ : भगवान के आध्यात्मिक रूवरूप के प्राकट्य और मृत्यु के समय कृपा हेतु प्रार्थनाएँ

मंत्र 12 - 14 भगवान और उनकी भौतिक शक्तियों के मध्य संबंध को समझने की आवश्यकता को समझाता है। मंत्र 15 वर्णन करता है कि भगवान का साक्षात्कार प्राप्त करने के लिए व्यक्ति को उनकी आध्यात्मिक शक्ति, ब्रह्मज्योति के साथ उनके संबंध को समझना भी आवश्यक है। मंत्र 16 भगवान से उनके आध्यात्मिक स्वरूप को प्रकट करने की मंत्र 15 की याचना को जारी रखता है। मंत्र 17 में, प्रार्थना मृत्यु के समय कृष्ण को समझने पर बल देती है। मंत्र 18 कृष्ण की कृपा प्राप्त करने की अभिलाषा रखने वाले भक्त की अंतिम प्रार्थना है।

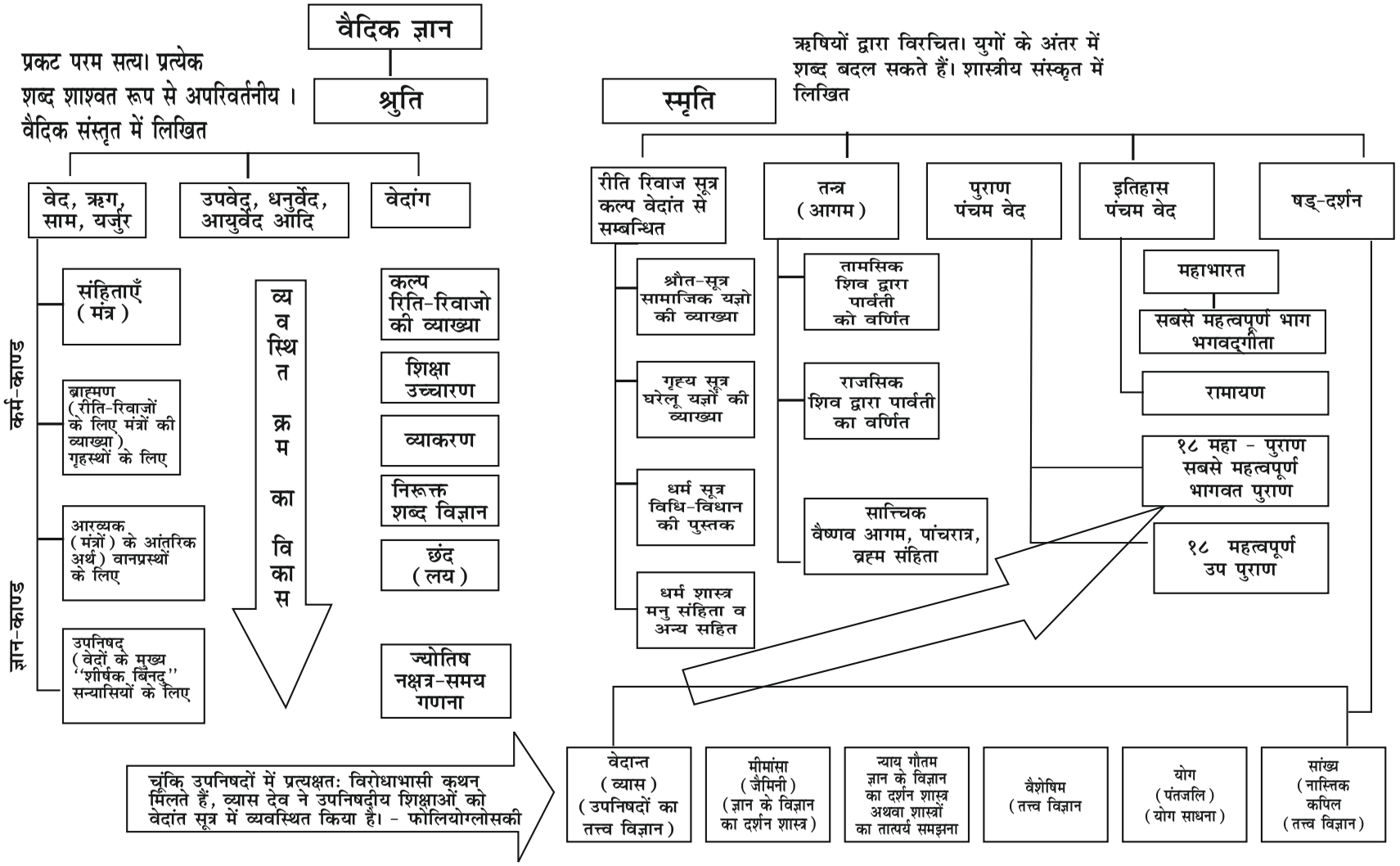

मुडकोपनिषद के अनुसार, आरंभ में ऋग्वेद की २१ शाखाएँ थी, यजुर की १०९, साम् की १००० और अथर्व की ९ अथवा कुल मिलाकर ११३० शाखाएँ थी। प्रत्येक शाखा के ४ भाग हैं संहिता, ब्राह्मण, आरण्यक व उपनिषद । फलस्वरूप मूलत: ११३० संहिताएं थी, ११३०

हमारे आचार्य इन पाँच दर्शनों को उचित रूप में वैदिक नहीं मानते क्योंकि इनमें भक्ति अनुपस्थित है व परम व जीव की अनुचित प्रस्तुतियाँ हैं, तथापि, इनमें से प्रत्येक दर्शन वैदिक में कुछ न कुछ योगदान देता है।
ज्ञान मीमांसा (ज्ञान के विज्ञान का दर्शन शास्त्र)- क्या कोई चीज निश्चित रूप से जानी जा सकती है और यदि हाँ तो कैसे (प्रमाण)
तत्व विज्ञान- जिसे जाना जा सकता है (प्रमेय) वह इसकी विषय वस्तु है

पूर्व स्वाध्याय (आरंभिक स्वयं अध्ययन)
बंद पुस्तक मूल्यांकन हेतु प्रश्न

परिचय

1. वेद शब्द का अर्थ क्या है?
2. एक बद्ध जीवात्मा के चार दोषों के नाम लिखिए।
3. तीन प्रमाणों के विषय में लिखिए।
4. कारण बताइए कि शब्द प्रमाण ज्ञान अर्जित करने का सर्वश्रेष्ठ मार्ग क्यों है?
5. भौतिक जगत् में ज्ञान प्राप्ति के दो तरीके कौन से हैं?
6. एक प्रामाणिक गुरू की दो योग्यताएँ कौन सी है?

मंत्र १

7. निम्नलिखित शब्दों के अर्थ लिखिए

अ. ईशावास्य

ब. परा व अपरा प्रकृति

स. भागवत साम्यवाद

द. अपौरुषेय

मंत्र २

8. कर्म, अकर्म व विकर्म को परिभाषित कीजिए।

मंत्र ३

9. आत्म-हा शब्द का अर्थ समझाइए।
10. सुर व असुर शब्दों की परिभाषा दीजिए।

मंत्र ५

11. अंतर्यामी का क्या अर्थ है?
12. 'तद् दूरे तद्वन्तिके' वाक्यांश का अर्थ बताइए।

मंत्र ६-८

13. निम्न शब्दों का अर्थ लिखिए

अ. एकत्वं पनुपश्यतः मंत्र 6-7

ब. शुद्धं अपापविद्धं मंत्र 8

14. भगवान किस प्रकार से अशरीर हैं?

मंत्र ११

15. हिरण्यकशिपु नाम का अर्थ स्पष्ट कीजिए।
16. भौतिक जगत के कष्ट अप्रत्यक्ष रूप से हमें क्या स्मरण कराने का कार्य करते हैं?

मंत्र १५

17. हिरण्यमयेन पात्रेण का अर्थ स्पष्ट कीजिए।

श्री ईशोपनिषद् से चुनी हुई उपमाएँ

परिचय

श्रुति माता के तुल्य मानी जाती है। बहुत सारा ज्ञान हमें अपनी माता से ही प्राप्त होता है। उदाहरणार्थ यदि आप जानना चाहें कि आपका पिता कौन है तो इसका उत्तर कौन दे सकता है?आपकी माता...इसी प्रकार यदि आप अपने अनुभव से परे, अपने प्रायोगिक ज्ञान से परे, अपनी इंद्रियों के कार्यों से परे कुछ जानना चाहते हैं, तो आपको वेदों को स्वीकार करना होगा।

आहवान

शरीर का हाथ तभी तक पूर्ण इकाई है, जब तक वह संपूर्ण शरीर से जुड़ा हुआ रहता है। जब हाथ को शरीर से काट कर अलग कर दिया जाता है, तो वह हाथ की तरह प्रतीत तो होता है, किंतु उसमें वस्तुत: हाथ की एक भी शक्ति नहीं रहती। इसी प्रकार सारे जीव परम् पूर्ण के अंश हैं और यदि उन्हें परम् पूर्ण से पृथक् कर दिया जाए, तो पूर्णता की भ्रामक अभिव्यक्ति उन्हें पूर्णतया संतुष्ट नहीं कर सकती।

मंत्र १

न तो पूँजीपति साम्यवादियों को केवल राजनीतिक चालों से दबा सकते हैं, न ही साम्यवादी पूँजीपतियों को केवल चुराई हुई रोटी के लिए लड़कर उन्हें हरा सकते हैं। यदि वे पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् के स्वामित्व को स्वीकार नहीं करते, तो वह सारी संपत्ति, जिस पर वे अपनी होने का दावा करते हैं, चुराई हुई है।

मंत्र ३

कभी-कभी इस भौतिक जगत की तुलना एक समुद्र से की जाती है और इस मानव शरीर की तुलना एक सुदृढ़ नाव से की जाती है, जो इस समुद्र को पार करने के लिए विशेष रूप से निर्मित की गई है। वैदिक शास्त्रों तथा आचार्यों की तुलना कुशल नाविकों से की जाती है और मानव शरीर की सुविधाओं की तुलना अनुकूल मंद समीर से की जाती है, जो नाव को सरलता से इच्छित लक्ष्य की ओर ले जाने में सहायक होती है। यदि इन समस्त सुविधाओं के होते हुए भी कोई मनुष्य अपने जीवन का पूर्ण उपयोग आत्म-साक्षात्कार के लिए नहीं कर पाता, तो उसे आत्महा अर्थात् आत्मा का हनन करने वाला समझना चाहिए।

मंत्र ४

विष्णु पुराण में उनकी शक्तियों की तुलना अग्नि से उद्भूत ताप तथा प्रकाश से की गई है। यद्यपि अग्नि एक स्थान पर बनी रहती है तथापि वह अपने प्रकाश तथा ताप को कुछ दूरी तक वितरित कर सकती है। इसी प्रकार, पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् अपने दिव्य धाम में स्थिर रहते हुए भी अपनी विभिन्न शक्तियों को सर्वत्र बिखेर सकते हैं।

मंत्र ७

गुणात्मक दृष्टि से जीव परमेश्वर से अभिन्न हैं, जिस प्रकार अग्नि के स्फुलिंग और अग्नि गुण की दृष्टि से एक ही हैं। तथापि मात्रा के दृष्टि से ये स्फुलिंग अग्नि के समान नहीं है, क्योंकि स्फुलिंग में जो ताप तथा प्रकाश की मात्रा रहती है, वह अग्नि के ताप तथा प्रकाश की मात्रा के तुल्य नहीं होती।

ये गुण सूक्ष्म मात्रा में उपस्थित रहते हैं, क्योंकि जीव उन परम् पूर्ण का क्षुद्र अंश ही होता है। एक अन्य उदाहरण की दृष्टि से, समुद्र की एक बूँद में जितनी मात्रा में नमक होता है, वह कभी भी पूरे समुद्र में उपस्थित नमक की मात्रा के तुल्य नहीं होता। किंतु एक बूँद में उपस्थित नमक अपने रासायनिक संघटन में सारे समुद्र में उपस्थित नमक के समान ही होता है।

मंत्र ९

नास्तिक लोगों के द्वारा विद्या की प्रगति उनकी ही खतरनाक है, जितनी कि सर्प के फन पर एक बहुतमूल्य मणि होती है। मणि से विभूषित सर्प मणिविहिन सर्प से कहीं अधिक खतरनाक होता है।

हरि भक्ति सुधोदय (3.11.12) में ईश्वरविहीन लोगों द्वारा शिक्षा की उन्नति की तुलना शव के श्रृंगार से की गई है।

मंत्र १२

श्री ईशोपनिषद् इंगित करता है कि जो मनुष्य देवताओं की पूजा करता है तथा उनके भौतिक ग्रहों को प्राप्त कर लेता है, वह भी ब्रह्माण्ड के सर्वाधिक अंधकारमय भाग में ही रह जाता है। सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड विशालकाय भौतिक तत्वों से ढँका हुआ है; ठीक वैसे ही जैसे नारियल एक कवच से ढँका होता है, अत: इसके अंदर गहन अंधकार है। इसलिए इसे प्रकाशित करने के लिए सूर्य और चन्द्रमा की आवश्यकता रहती है।

मंत्र १३

जिस व्यक्ति ने कोलकाता का टिकट खरीदा है, वह कोलकाता पहुँच सकता है, किंतु मुम्बई नहीं। फिर भी, तथाकथित गुरू कहते हैं कि कोई भी पथ तथा सारे मार्ग किसी को भी परम गन्तव्य तक ले जा सकते हैं।

श्री ईशोपनिषद् खुली पुस्तक मूल्याकंन प्रश्न

प्रश्न १

अपने शब्दों में ईशावास्य सिद्धांत का प्रयोग करने के व्यावहारिक तरीकों व उससे होने वाले लाभों की चर्चा कीजिए :

- सामान्यत: समाज में
- इस्कॉन में
- आपके अपने जीवन में

अपने उत्तर में श्री ईशोपनिषद् मंत्र 1–3 व तात्पर्यों का संदर्भ दीजिए ।

(व्यक्तिगत / प्रचार में उपयोग)

प्रश्न २

अपने शब्दों में व्याख्या कीजिए कि कैसे श्रील प्रभुपाद द्वारा हमें दी गई आध्यात्मिक जीवन की पद्धति हमें आध्यात्मिक और भौतिक ज्ञान के एक संतुलित कार्यक्रम को प्राप्त करने में समर्थ बनाती है। अपने उत्तर में :

- श्री ईशोपनिषद् मंत्र 11 व तात्पर्य से संदर्भ दीजिए ।
- अपने अनुभव से उदाहरण दीजिए और सामान्यत: इस्कॉन के भक्तों के अनुभव से भी उदाहरण दीजिए ।

(प्रचार में उपयोग)

प्रश्न ३

श्री ईशोपनिषद् के श्लोकों, तात्पर्यों, उपमाओं व श्रील प्रभुपाद के ईशोपनिषद, प्रवचनों से समुचित प्रमाण देकर अपने शब्दों में, भगवान के व्यक्तिगत स्वरूप को स्थापित कीजिए ।

(प्रचार में उपयोग)

श्री उपदेशामृत विषय - वस्तु

श्लोक १-७	**वैधी-साधना-भक्ति**
श्लोक ८	**रागानुग-साधना भक्ति**
श्लोक ९-११	**भाव-भक्ति और प्रेम भक्ति**

वैधी-साधना भक्ति

आमुख	कृष्णभावनामृत का लक्ष्य व उसे प्राप्त करने के साधन
श्लोक 1	छः वेगों को नियंत्रित करना
श्लोक 2	भक्तिमय सेवा में बाधाएँ
श्लोक 3	सिद्धांत जो भक्ति में सहायता करते हैं
श्लोक 4	प्रेम से भरे विनिमय
श्लोक 5	उन्नति के स्तर के अनुसार संग
श्लोक 6	शुद्ध भक्त का संग
श्लोक 7	पवित्र नाम का जप

रागानुग- साधना भक्ति

श्लोक 8	स्वाभाविक भक्तिमय सेवा का अभ्यास

भाव-भक्ति और प्रेम भक्ति

श्लोक 9	भौतिक व आध्यात्मिक जगतों का अनुक्रम / वर्गीकरण
श्लोक 10	विभिन्न प्रकार के मनुष्यों का अनुक्रम/वर्गीकरण
श्लोक 11	राधा-कुण्ड की महिमा

श्री उपदेशामृत का संक्षिप्त अवलोकन

वैधी-साधना-भक्ति : श्लोक १-७

आमुख - कृष्ण भावनामृत का लक्ष्य व उसे प्राप्त करने के साधन

कृष्ण भावनामृत में पूर्णता प्राप्त करने के लिए व्यक्ति को वृंदावन के षड गोस्वामियों के निर्देशों का अनुसरण करना चाहिए। इसके लिए श्रील रूप गोस्वामी द्वारा उपदेशामृत में दिए गए निर्देशों के अनुसार मन और इंद्रियों पर नियंत्रण करना चाहिए।

श्लोक १ - छह वेगों को नियंत्रित करना

यह श्लोक आध्यात्मिक जीवन के लिए आरंभिक शर्त की व्याख्या करता है, जैसा कि आमुख के तीसरे मुख्य बिंदु में वर्णन किया गया है-मन और इंद्रियों को नियंत्रित करने की आवश्यकता। जो व्यक्ति इन शर्तों का पालन करने में निपुण है, वह गुरू बनने के योग्य है।

श्लोक २ - भक्तिमय सेवा में बाधाएँ

श्लोक 2 मन और इंद्रियों को नियंत्रित न कर पाने पर होने वाले परिणामों का वर्णन करता है। अपने स्वयं के चुनाव द्वारा बद्ध जीवात्मा भगवान् की माया शक्ति के अधीन हो कर पतित हो गया है। इसके प्रभाव से, उसे शरीर की माँगों को पूरा करना पड़ता है, जो इसी शक्ति से निर्मित है। श्लोक 2 आगे वर्णन करता है कि इन मूलभूत आवश्यकताओं को कैसे पूरा किया जाए जिससे ये भौतिक उलझन के स्थान पर आध्यात्मिक प्रगति को बढ़ावा दें।

श्लोक ३ - सिद्धांत जो भक्ति में सहायता करते हैं

ऐसे छह सिद्धांत बताए गए हैं, जो हमें शुद्ध भक्तिमय सेवा के मार्ग पर प्रगति करने में सहायता करते हैं, उनकी चर्चा करने से पहले श्रील रूप गोस्वामी व्याख्या करते हैं कि शुद्ध भक्ति क्या है।

श्लोक ४ - छह प्रेम में भरे विनिमय

पिछले अध्यायों में हमने उल्लेख किया था कि व्यक्ति की इच्छाएँ व महत्त्वकांक्षाएँ उस की संगति के अनुसार विकसित होती हैं-संगात संजायते कामः (भगवद्गीता 2.62)। अतएव, यदि हम कृष्ण भावनामृत में प्रगति करना चाहते हैं तो हमें भक्तों का संग करना चाहिए। श्लोक 4 बताता है कि संग से क्या तात्पर्य है। यह इसका वर्णन भी आरंभ करता है कि भक्तों का संग कैसे करना चाहिए। विभिन्न प्रकार के भक्तों का संग कैसे करना चाहिए, इस विषय पर और निर्देश श्लोक 5 और 6 में मिलते हैं।

श्लोक ५ - उन्नति के स्तर के अनुसार संग

पिछले श्लोक में वर्णित प्रेम से भरे छह विनिमयों को लागू करने के लिए व्यक्ति को ऐसे उचित व्यक्तियों का चुनाव करना होगा, जिनके साथ ये प्रेममय विनिमय किए जाने चाहिए। इस श्लोक का विषय है कि किस प्रकार के वैष्णव को हमें मित्र के रूप में चुनना चाहिए और विभिन्न प्रकार के वैष्णवों के साथ कैसे व्यवहार करना चाहिए। सभी भक्तों का सम्मान किया जाना चाहिए, किंतु आध्यात्मिक उन्नति के लिए हमें गंभीर भक्तों का संग करना चाहिए और लापरवाह संग से दूर रहना चाहिए।

श्लोक ६ - शुद्ध भक्त का संग

श्लोक 6 आगे चर्चा करता है कि हमें भक्तों का संग कैसे करना चाहिए, विशेषकर गुरू का संग, जिन्हें दिव्य धरातल पर विद्यमान माना जाता है।

श्लोक ७ - पवित्र नाम का जप

उत्तम भक्ति के स्तर पर आने के लिए हमें सबसे पहले अपने हृदय के दर्पण को आच्छादित करने वाले भौतिक दूषणों से अपनी चेतना को मुक्त व शुद्ध करना होगा। प्रतिदिन ध्यानपूर्वक हरे कृष्ण महामंत्र के जप से हम धीरे-धीरे अज्ञान के पीलिया से ठीक होते जाते हैं और कृष्ण के सेवक के रूप में हमारी आनंदमय स्वरूप स्थिति को पुनर्जीवित कर पाते हैं।

रागानुग-साधना भक्ति : श्लोक ८

इस श्लोक में श्रील रूप गोस्वामी सभी सुझावों का सार देते हैं: बिना विचलन के अपने मन को कृष्ण पर स्थिर (केंद्रित) करने हेतु निरंतर कृष्ण के विषय में श्रवण करना, उनके नाम का जप करना और उनकी लीलाओं का स्मरण करना।

भाव-भक्ति और प्रेम-भक्ति : श्लोक ९-११

श्लोक 9 भौतिक और आध्यात्मिक जगतों का अनुक्रम

श्लोक 9 भगवान की सृष्टि के विभिन्न क्षेत्रों का वर्णन करता है, जिसमें राधाकुंड सर्वोच्च स्थान है।

श्लोक १० विभिन्न प्रकार के मनुष्यों का अनुक्रम

श्लोक 10 सृष्टि के भीतर विभिन्न प्रकार के मनुष्यों के अनुक्रम का वर्णन करता है व स्पष्ट करता है कि राधा-कुंड सर्वोच्च मनुष्यों के लिए निवास स्थान है।

श्लोक ११ राधाकुंड की महिमा

श्लोक 11 दक्षता से यह स्पष्ट करता है कि आध्यात्मिक जीवन का अनुशीलन एक धीमी व क्रमिक प्रक्रिया है। जिस प्रकार भागवतम् के पहले नौ स्कंधों का अध्ययन करना अनिवार्य है, उसी प्रकार व्यक्ति को उपदेशामृत के प्रथम दस श्लोकों को आत्मसात करने के पश्चात् ही राधाकुंड के विषय में अध्ययन करना चाहिए।

पूर्व स्वाध्याय (आरंभिक स्वयं अध्ययन)
बंद पुस्तक मूल्यांकन हेतु प्रश्न

आमुख

1. किसके निरीक्षण में कृष्ण भावनामृत आंदोलन संचालित किया जा रहा है?
2. आध्यात्मिक कार्यकलाप में व्यक्ति का पहला कर्त्तव्य क्या है?
3. कृष्ण भावनामृत में हमारी प्रगति किस पर निर्भर है?
4. गोस्वामी की परिभाषा दीजिए।

श्लोक १

5. क्रोध का भगवान् की सेवा में उपयोग करने के श्लोक में दिए गए तीन उदाहरण दीजिए।
6. कृष्ण भावनामृत आंदोलन विवाह को प्रोत्साहित क्यों करता है?
7. प्रसादम् का सेवन करते समय भी व्यक्ति को स्वादिष्ट व्यंजनों से क्यों बचना चाहिए?
8. गो-दास की परिभाषा दीजिए।

श्लोक २

9. भगवान की तीन प्राथमिक शक्तियों का वर्णन कीजिए।
10. महात्मा और दुरात्मा की परिभाषा लिखिए।
11. त्रिविध तापों के संस्कृत व हिंदी में नाम लिखिए।
12. नियमाग्रह के दो अर्थों का संक्षेप में वर्णन कीजिए।
13. तीन प्रकार के अत्याहारियों के नाम लिखिए।

श्लोक ३

14. संस्कृत या हिंदी में भक्ति की नौ विधाओं (विधियों) के नाम लिखिए।
15. 'अवश्य रक्षिबे कृष्ण' का क्या अर्थ है?
16. तत् तत् कर्म प्रवर्तनात् के दो पहलुओं का संक्षेप में वर्णन कीजिए।

श्लोक ४

17. गुह्यम् आख्याति पृच्छति का अर्थ स्पष्ट कीजिए।
18. एक व्यक्ति को अपनी आमदनी का उपयोग कैसे करना चाहिए।

श्लोक ५

19. एक व्यक्ति को हरिनाम का जप करने वाले भक्त (कनिष्ठ अधिकारी) से कैसा व्यवहार करना चाहिए?
20. एक मध्यम अधिकारी के चार लक्षणों को लिखिए।
21. एक उत्तम अधिकारी के तीन लक्षणों को लिखिए।

श्लोक ६

22. एक मध्यम अधिकारी के चार लक्षणों को लिखिए।
23. आध्यात्मिक गुरू को किसके सुझावों के अधीन नहीं होना चाहिए?

श्लोक ७

24. 'जीवेर स्वरूप हय कृष्णेर नित्य दास' का क्या अर्थ है?
25. दुराश्रय की परिभाषा दीजिए।
26. हरिनाम के जप में तीन अवस्थाओं के नाम लिखिए।
27. किस स्तर पर माया एक भक्त को विचलित नहीं कर सकती है?

श्लोक ८

28. सभी सुझावों का सार क्या है?
29. शांत रस, दास्य रस और सख्य रस में से प्रत्येक में परिपूर्ण भक्तों के तीन-तीन उदाहरण दीजिए।

श्लोक ९

30. विभिन्न आध्यात्मिक स्थानों का अनुक्रम लिखिए ।
31. श्रील रूप गोस्वामी ने राधा-कुंड को अधिक महत्व क्यों दिया है?

श्लोक १०

32. गोपियाँ सभी भक्तों में सर्वश्रेष्ठ क्यों हैं?
33. विप्रलम्भ सेवा की परिभाषा लिखिए।

श्लोक ११

34. राधा-कुंड में एक बार भी स्नान करने से क्या परिणाम होता है?

उपदेशामृत से चुनी हुई उपमाएँ

श्लोक १

हाथी भले ही नदी में भली-भाँति स्नान कर ले, किंतु जैसे ही वह किनारे पर पहुँचता है, वह अपने सम्पूर्ण शरीर पर धूल छिड़क लेता है। तो, इस स्नान से क्या लाभ हुआ? इसी प्रकार अनेक आध्यात्मिक साधक हरे कृष्ण महामंत्र का जप करते हैं और साथ ही यह सोचकर निषिद्ध कर्म भी करते हैं कि उनके जप से उनके सारे पाप नष्ट हो जांएगे।

श्लोक २

यह स्वाभाविक है कि एक नवविवाहिता कन्या अपने पति से सन्तान की कामना करती है, किंतु वह विवाह के तुंरत बाद सन्तान प्राप्त करने की आशा नहीं कर सकती। निस्संदेह, विवाह होते ही वह संतान प्राप्ति के लिए प्रयास कर सकती है, किंतु उसे अपने पति के प्रति सर्मपित हो कर विश्वस्त होना पड़ेगा कि उचित समय में संतान का विकास व जन्म होगा। इसी प्रकार, भक्ति में समर्पण का अर्थ है विश्वस्त होना।

श्लोक ६

व्यक्ति को एक भक्त के निम्नकुल में उत्पन्न होने, उसके कुरूप चेहरे, विकृत या रोगी अथवा अशक्त शरीर की परवाह न करते हुए इन लक्षणों को अनदेखा कर देना चाहिए .... यह ठीक गंगाजल के समान है, जो कभी-कभी वर्षाऋतु में बुदबुदे, फेन तथा कीचड़ से पूरित हो जाता हैं। किंतु गंगाजल कभी दूषित नहीं होता ।

एक उन्मत्त हाथी विनाश कर सकता है, विशेष रूप से जब वह एक सुंदर कटे-छँटे उद्यान में प्रवेश कर जाता है। अतएव मनुष्य को अत्यंत सावधान रहना चाहिए कि उससे किसी वैष्णव के प्रति अपराध न हो।

श्लोक ७

पीलिया से ग्रस्त एक रोगी की जीभ मिश्री का स्वाद नहीं ले पाती। किंतु मनुष्य को यह जानना चाहिए कि पीलिया के लिए मिश्री ही एकमात्र विशिष्ट औषधि है। इसी प्रकार, मानवता की वर्तमान दिग्भ्रमित अवस्था में, कृष्णभावनामृत, भगवान के पवित्र नाम-हरे कृष्ण का जप ही एकमात्र औषधी है।

उपदेशामृत खुली पुस्तक मूल्यांकन प्रश्न

प्रश्न १

श्री उपदेशामृत श्लोक 1 में वर्णित छः वेगों को नियंत्रित करने के महत्व पर प्रकार डालिए। इन छः वेगों को नियंत्रित करने के लिए आप कौन से व्यावहारिक उपाय कर रहे हैं? अपने उत्तर में श्री उपदेशामृत श्लोक 1 तथा तात्पर्य से उचित संदर्भ दीजिए।

(व्यक्तिगत उपयोग)

प्रश्न २

अपनी भक्तिमय सेवा की साधना में 'अत्याहार' व 'प्रयास' से बचने के महत्व की व्याख्या कीजिए। आप इन प्रवृत्तियों से कैसे बच सकते हैं? अपने उत्तर में श्री उपदेशामृत श्लोक 2 तथा तात्पर्य से उचित संदर्भ दीजिए।

(व्यक्तिगत उपयोग)

प्रश्न ३

श्री उपेदशामृत श्लोक 2 व 3 तथा तात्पर्यों की सहायता से भक्तिमय सेवा की साधना में भक्तों को संग लेने व अभक्तों के संग से बचने के महत्व का वर्णन कीजिए।

(समझ)

प्रश्न ४

अपनी भक्तिमय सेवा के अभ्यास में उत्साह तथा निश्चय का विकास करने में जिन चुनौतियों का सामना आप कर रहे हैं, उन पर चर्चा कीजिए। अपने उत्तर में उपदेशामृत श्लोक 3 से संदर्भ दीजिए।

(व्यक्तिगत उपयोग)

प्रश्न ५

उन उपायों पर चर्चा कीजिए जिनसे इस्कॉन भक्तों के बीच छः प्रेम से भरे विनिमयों की सुविधा प्रदान करने में आने वाली चुनौतियों पर विजय प्राप्त की जा सकती है।

(व्यक्तिगत उपयोग)

प्रश्न ६

श्री उपदेशामृत श्लोक 6 तथा तात्पर्य का संदर्भ देते हुए वैष्णवों के प्रति उचित भाव की अपने शब्दों में व्याख्या कीजिए और अनुचित व्यवहार के परिणामों पर चर्चा कीजिए।

प्रश्न ७

गौडीय वैष्णवों के लिए राधा-कुंड के महत्व पर अपने शब्दों में चर्चा कीजिए। राधाकुंड में स्नान व निवास करने के प्रति श्रील प्रभुपाद का भाव क्या है? अपने उत्तर में, श्री उपदेशामृत श्लोक 9-11, तात्पर्यों व इस विषय पर श्रील प्रभुपाद के प्रवचनों के संदर्भ दीजिए।

(भाव व अभियान)

विद्यार्थी का नाम ..... इकाई .....

दिनांक	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२
मंगल आरती																						
देर से																						
घर पर																						
तुलसी आरती																						
घर पर																						
गुरू पूजा																						
घर पर																						
श्रीमद भागवतम कक्षा																						
रेडियो / रिकार्डिंग																						
भक्ति शास्त्री कक्षा																						
देर से																						
१६ मालाएँ																						

विद्यार्थी का नाम ..... इकाई .....

दिनांक	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२
मंगल आरती																						
देर से																						
घर पर																						
तुलसी आरती																						
घर पर																						
गुरू पूजा																						
घर पर																						
श्रीमद भागवतम कक्षा																						
रेडियो / रिकार्डिंग																						
भक्ति शास्त्री कक्षा																						
देर से																						
१६ मालाएँ																						

विद्यार्थी का नाम ..... इकाई .....

दिनांक	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२
मंगल आरती																						
देर से																						
घर पर																						
तुलसी आरती																						
घर पर																						
गुरू पूजा																						
घर पर																						
श्रीमद भागवतम कक्षा																						
रेडियो / रिकार्डिंग																						
भक्ति शास्त्री कक्षा																						
देर से																						
१६ मालाएँ																						

विद्यार्थी का नाम ..... इकाई .....

दिनांक	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२
मंगल आरती																						
देर से																						
घर पर																						
तुलसी आरती																						
घर पर																						
गुरू पूजा																						
घर पर																						
श्रीमद भागवतम कक्षा																						
रेडियो / रिकार्डिंग																						
भक्ति शास्त्री कक्षा																						
देर से																						
१६ मालाएँ																						

विद्यार्थी का नाम ..... इकाई .....

दिनांक	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२
मंगल आरती																						
देर से																						
घर पर																						
तुलसी आरती																						
घर पर																						
गुरू पूजा																						
घर पर																						
श्रीमद भागवतम कक्षा																						
रेडियो / रिकार्डिंग																						
भक्ति शास्त्री कक्षा																						
देर से																						
१६ मालाएँ																						

विद्यार्थी का नाम ..... इकाई .....

दिनांक	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२
मंगल आरती																						
देर से																						
घर पर																						
तुलसी आरती																						
घर पर																						
गुरू पूजा																						
घर पर																						
श्रीमद भागवतम कक्षा																						
रेडियो / रिकार्डिंग																						
भक्ति शास्त्री कक्षा																						
देर से																						
१६ मालाएँ																						

विद्यार्थी का नाम ..... इकाई .....

दिनांक	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२
मंगल आरती																						
देर से																						
घर पर																						
तुलसी आरती																						
घर पर																						
गुरू पूजा																						
घर पर																						
श्रीमद भागवतम कक्षा																						
रेडियो / रिकार्डिंग																						
भक्ति शास्त्री कक्षा																						
देर से																						
१६ मालाएँ																						

विद्यार्थी का नाम ..... इकाई .....

दिनांक	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२
मंगल आरती																						
देर से																						
घर पर																						
तुलसी आरती																						
घर पर																						
गुरू पूजा																						
घर पर																						
श्रीमद भागवतम कक्षा																						
रेडियो / रिकार्डिंग																						
भक्ति शास्त्री कक्षा																						
देर से																						
१६ मालाएँ																						

विद्यार्थी का नाम ..... इकाई .....

दिनांक	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२
मंगल आरती																						
देर से																						
घर पर																						
तुलसी आरती																						
घर पर																						
गुरू पूजा																						
घर पर																						
श्रीमद भागवतम कक्षा																						
रेडियो / रिकार्डिंग																						
भक्ति शास्त्री कक्षा																						
देर से																						
१६ मालाएँ																						

विद्यार्थी का नाम ..... इकाई .....

दिनांक	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२
मंगल आरती																						
देर से																						
घर पर																						
तुलसी आरती																						
घर पर																						
गुरू पूजा																						
घर पर																						
श्रीमद भागवतम कक्षा																						
रेडियो / रिकार्डिंग																						
भक्ति शास्त्री कक्षा																						
देर से																						
१६ मालाएँ																						

विद्यार्थी का नाम ..... इकाई .....

दिनांक	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२
मंगल आरती																						
देर से																						
घर पर																						
तुलसी आरती																						
घर पर																						
गुरू पूजा																						
घर पर																						
श्रीमद भागवतम कक्षा																						
रेडियो / रिकार्डिंग																						
भक्ति शास्त्री कक्षा																						
देर से																						
१६ मालाएँ																						